अनुसंधान

मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू (ठाणंगसूत्त, ५२९) 'मुखरता सत्यवचननी विघातक छे'

प्राकृतभाषा अने जैन साहित्य विषयक
संपादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका

१२

संकलनकार : आचार्य विजयशीलचन्द्रसूरि • हरिवल्लभ भायाणी

શ્રી હેમચંદ્રાચાર્ય

कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी
स्मृतिसंस्कार शिक्षणनिधि
अहमदाबाद
१९९८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू (ठाणंगसुत्त , ५२९)
'मुखरता सत्यवचननी विघातक छे'

अनुसंधान

प्राकृतभाषा अने जैन साहित्य विषयक
संपादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका

१२

संपादको : विजयशीलचन्द्रसूरि
हरिवल्लभ भायाणी

શ્રી હેમચંદ્રાચાર્ય

कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी
स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि
अहमदावाद
१९९८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुसंधान १२

संपर्क : **हरिवल्लभ भायाणी**
२५/२, विमानगर, सेटेलाईट रोड,
अहमदावाद - ३८० ०१५.

प्रकाशक : **कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि, अहमदावाद , १९९७**

किंमत : रू. ३५-००

प्राप्तिस्थान : **सरस्वती पुस्तक भंडार**
११२, हाथीखाना, रतनपोल,
अहमदावाद - ३८० ००१.

मुद्रक : **राकेश टाइपो-डुप्लिकेटींग वर्क्स**
राकेशभाई हर्षदभाई शाह
२७२, सेलर, बी.जी. टावर्स,
दिल्ली दरवाजा बहार,
अहमदावाद - ३८० ००४.
(फोन : ४६८९०९)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय निवेदन

केटलांक सामयिको माटे एवुं बने छे के तेना संपादके ज तेना लेखक पण बनवुं पडे छे. "अनुसंधान" पण आ परिस्थितिनो केटलेक अंशे अनुभव करे ज छे.

अलबत्त, आ प्रकारना सामयिकमां स्वतंत्र सर्जनात्मक कही शकाय तेवी सामग्री करतां संशोधनात्मक के अन्वेषणात्मक सामग्रीनुं प्रमाण वधु होय, एटले संपादक ए अर्थमां पण संपादक ज रहे छे, ते मोटुं आश्वासन गणाय.

"अनुसंधान" माटे प्रेमपूर्वक पोतानां संपादनो, संशोधनो के अन्वेषण-नोंधो पाठवनार मित्रोनुं एक बाबते आदरपूर्वक ध्यान दोरीशुं के तेओ जे पण सामग्री पाठवे ते सुवाच्य अक्षरोमां अने नागरी (बालबोध) लिपिमां ज लखीने पाठवे, तो कंपोज करनार पर तथा प्रूफरीडर पर तेमनो मोटो अनुग्रह थशे.

– संपादको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रम

१.	मातृकाप्रकरण : एक महत्त्वपूर्ण अभ्यसनीय कृति	विजयशीलचन्द्रसूरि हरिवल्लभ भायाणी	१-४८
२.	ज्ञानधर्मकृत दामन्नककुलपुत्रक-रास	कल्पना के. शेठ	४९-७०
३.	"सप्तदलं लेखकमलम्" • एक संस्कृत पत्र	विजयशीलचन्द्रसूरि	७१-८०
४.	श्रीसहजकीर्ति उपाध्याय रचित श्रीपार्श्वनाथ-महादंडक स्तुति ॥	प्रद्युम्नसूरि	८१-८९
५.	एक पत्र	मुनि भुवनचन्द्र	९०-९२
६.	Some Notes on the Bauddha Sahajayānī Siddha-Nātha Tradition	H. C. Bhayani	९३-१०४
	1. Saraha's मातृका-प्रथमाक्षर-दोहक in Apabhraṁśa		९३-९६
	2. Were Śānti and Bhusaka the same or different ?		९७-९९
	3. One more instance of the Jhambaḍaka Song in Apabrāṁśa		१००-१०१
	4. On the Names of Some Siddha-Nāthas		१०२-१०४
७.	सांकळियुं : "अनुसंधान" - १ थी १२ अंकोनुं	साध्वी श्री चारुशीलाश्रीजी	१०५-१३४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मातृकाप्रकरण : एक महत्त्वपूर्ण अभ्यसनीय कृति

– सं. विजयशीलचन्द्रसूरि / हरिवल्लभ भायाणी

'मातृकाप्रकरण' ए संस्कृत तेमज प्राकृत भाषाओने लगती, मुख्यत्वे वर्णाम्नायने विषय बनावीने चालती, व्याकरणविषयक एक विलक्षण रचना छे. संस्कृत व्याकरणोमां वर्णसमाम्नाय (स्वरो तथा व्यंजनो)ना निरूपण-प्रसंगे एम कहेवामां आवतुं होय छे के "बाकीनो आम्नाय लोकात्-लोकसम्प्रदाय थकी जाणी लेवो." संभवतः आ लोक-सम्प्रदायने शब्दबद्ध करवानो अहीं मजानो प्रयास थयो छे, जे अद्वितीय छे.

कर्ताए श्लोकात्मक सूत्रोनी पद्धति अपनावी छे. श्लोकसूत्र अने तेनुं उदाहरण - आ सामान्य क्रम रह्यो छे. प्रशस्ति-सहित आवां कुल ३२२ सूत्रो छे, जेमां १ थी २०८ सूत्रो संस्कृत व्याकरण माटे छे. एमां छंदो, आस्यप्रयत्नो, जोडाक्षरोनी प्रक्रिया वगेरे विविध विषयोनो भारे ऊंडाणपूर्वक विचार थयो छे. रजूआत एटली बधी प्रगल्भ परंतु मार्मिक के गूढ शैलीमां थई छे के सादी वातो पण कांईक रहस्यमढ्यो परिवेष धारण करती जणाय छे.

वर्णोनी संख्या (१९९) वर्णवतां कर्ता जैन-परंपरानुसारी द्रव्य-पर्यायनी अने जघन्य-उत्कृष्टनी शास्त्रीय प्रक्रियाने (२०१) लई आव्या छे, जे खरेखर अद्‌भुत छे अने कर्तानी विलक्षण प्रतिभानुं द्योतन करनार छे.

२१० थी २२४ प्राकृत (सामान्य) अने शौरसेनी भाषा माटे, २२६-२३१ मागधी माटे, २३२-२३५ पैशाची माटे, २३६-२३९ चूलापैशाची माटे, २४०-२४९ अपभ्रंश माटे छे. २४९मा सूत्रमां गणावेली छ भाषा आ प्रमाणे छे : प्रकृति (संस्कृत), प्राकृत, शौरसेनी, मागधी, पैशाची, अपभ्रंश ; अंतमां तेने षडंगी वाक् गणावी तेने (तेनी लिपिने ?) हंसलिवि(पि) तरीके कर्ताए ओळखावी छे, जे संशोधको माटे विचारोत्तेजक बनी शके.

जे ते भाषाना नियमो तथा उदाहरणो आपवा उपरांत कर्ताए दरेकमां सर्वोदाहरणो आप्यां छे, जे खास नोंधवायोग्य बाबत छे : सूत्र ४१, २११, २२०, २२७, २३७, २४३ इत्यादि द्रष्टव्य छे.

वर्णाम्नाय अने तेनी खास विशेषताओ समजाववा माटे कर्ताए लोकोक्तिओ तथा उपमात्मक उदाहरणोनो एवो मार्मिक विनियोग कर्यो छे के जे कर्तानी कल्पना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा तर्कनी शक्ति माटे दाद आपवा प्रेरे. दा.त. –

लघुर्यदि पुरः कृत्वा व्यञ्जनो गुरुतां गतः ।
फलवान् वीतरागेऽपि विनयः प्राग् भवैषिणाम् ॥ (सू. ३१)

अनन्यत्रोदितैदादेः सवर्णत्वप्रयोजनम् ।
लोकः क्वापि गतो मित्रं स्वपदे प्रेरयत्यपि ॥ (सू. ४४)

अकृत्वा गर्विताकारं परेभ्यो वृद्धिदायिनाम् ।
महतामङ्ग संसारे रीतिरस्ति 'र'कारवत् ॥ (सू. ५२)

दिवसाद् बत मासस्य यथा नैकान्तमेकता ।
अनुदात्तादुदात्तस्य तथा नैकान्तमेकता ॥ (सू. २०३)

इत्यादि ॥

संस्कृतथी लईने चूलापैशाचिका सुधीना तमाम भाषा-प्रकारोने कर्ता **'सरस्वतीधर्म'** तरीके ओळखावे छे, जे दरेक प्रकरणने प्रांते लखेल इतिवचनमां जोई शकाय छे.

वर्णाम्नायनिरूपण तथा भाषानिरूपणनो प्रथम विभाग पत्या बाद बीजा विभागमां कर्ता 'विद्या'-निरूपण करे छे, जेमां क्रमशः भौतीय, याक्षीय, नाक्षत्रीय अने मूलदेवीय विद्याओ वर्णववामां आवी छे. एवुं समजाय छे के कर्ताने ते ते विद्यारूपे ते ते लिपि अभिप्रेत छे : दा.त. भूतलिपि (भौतीय, सू. २५०); अर्थात् ते ते लिपिमां केवो वर्णसमाम्नाय छे तेनुं तेओ निरूपण करी रह्या जणाय छे. यक्षलिपिमां बीजमंत्राक्षरोनो वर्णाम्नाय स्फुट थाय छे, अने ते ते मंत्राक्षरना देवता के अधिष्ठाता पण दर्शाव्या छे. 'नाक्षत्रीय'ने तेमणे **उडुलिपि** गणावी छे (सू. २८३). प्रांते १८ लिपिनामो अने ब्राह्मीलिपिनुं बयान कर्या बाद कर्ता बहु ज महत्त्वपूर्ण मुद्दो कहे छे के –

"बधुं ज सुकर बने, जो अभ्यास होय अने आम्नाय (नुं ज्ञान) होय तो. बाकी (न आवडतुं होय तो पण पोतानी जात प्रत्येना) अहोभाव-मात्रथी ज उद्भवती वक्रता अने जडतानो अमारे खप नथी."

त्रीजा विभागमां कर्ता 'मीमांसा'-विचारणा रजू करे छे. जो के तेना पण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केन्द्रमां तो वर्णाम्नाय ज छे, एटले एम कही शकाय के तर्क अने दर्शन शास्त्रनी दृष्टिए कर्ता वर्णाम्नाय विशे मीमांसा करे छे, अने तेमां ज समस्याओनी, द्रव्य-क्षेत्रादि भेदे शब्दार्थ-भेदनी, अनेकान्तनी, चार निक्षेपनी- वगेरेनी वातो तार्किक शैलीमां निरूपे छे.

एकंदरे, समग्र मातृकाप्रकरण अवलोकतां एवी प्राथमिक छाप पडे छे के आ ग्रंथ एक तरफथी तो व्याकरणविदोनो विषय बनी शके, तो बीजी तरफथी ते मन्त्रविदोनो पण विषय बनी ज शके. एटले आना अध्ययन माटे भाषाविज्ञाननी साथे साथे मंत्रविज्ञाननुं पण ज्ञान होय तो आ प्रकरणना हार्दनी वधु नजदीक पहोंची शकाय, तेम लागे छे.

आ प्रकरणना कर्ता छे नागपुरीय बृहत्तपागच्छ-अपरनाम पार्श्वचन्द्रगच्छना आदिपुरुष गच्छपति आचार्यश्री पार्श्वचन्द्रसूरिजीना शिष्य वाचक रामचन्द्रगणीना शिष्य वाचक अक्षयचन्द्र गणी. संभवतः विक्रमना १६मा शतकमां के १७मा शतकना पूर्वभागमां थयेला आ ग्रंथकार विशद प्रतिभासम्पन्न होवा जोईए, अने तर्क-व्याकरण-साहित्य-मंत्रशास्त्र-जिनागम-षट्दर्शन इत्यादि अनेक अनेक विद्या-शाखाओमां तेमनी अप्रतिहत गति होवी जोईए, एवुं आ प्रकरणमांथी पसार थनारने प्रतीत थया विना नहि रहे. पोताना गुरुने याद करवा उपरांत, पोताना अन्य उपकारी बे गुरुजनो - श्री यशश्चन्द्र तथा श्री रत्नचन्द्र गुरुने पण तेमणे प्रांते संभार्या छे. कर्ता चोक्कसपणे आमांथी कोना शिष्य हशे ते तो तेमनी पट्टावली जोवाथी ज समजी शकाय.

आ प्रकरण पर वर्षो पूर्वे डॉ. हरिवल्लभ भायाणीए काम करेलुं. तेमणे आनी नकल पण स्वयं करेली, आनो अंग्रेजी अनुवाद पण लखवा लीधेलो, अने भारतीय विद्या भवन के तेवी कोई संस्थाना आश्रये तेनुं प्रकाशन पण करवा लीधेलुं. परंतु ते काम अधूरुं ज वर्षो सुधी पड्युं रह्युं, अने पार पाडवानुं तेमनुं स्वप्न, पोतानां अन्यान्य गंजावर रोकाणोमां अटवायुं.

थोडा वखत पूर्वे तेमणे मातृकाप्रकरण अंगेनी आ बधी सामग्री भरेली पोतानी जूनी फाइल मारा हाथमां सोंपी, कह्युं के तमे आ तैयार करो.

में पहेली वखत आ प्रकरण जोयुं तथा तेना विशे सांभळ्युं. व्याकरण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषयक कृति होई मने रस पड्यो. फाइल तो जोई, पण में नक्की कर्युं के ग्रंथना प्रत्येक अक्षरमांथी पसार थवाय तो ज मजा पडे. एटले फाइल बाजुए मूकीने, तेनी में वडोदरा-संग्रहमांथी मेळवेली प्रतित परथी पूरी नकल करी, जे अत्रे प्रस्तुत छे. बीजी बे-त्रण प्रतिओ हती, परंतु बधी १९मा शतकनी ज, कोई एक मूळ प्रतिना आधारे ज लखायेली प्रतिओ होई पाठांतरोनो यत्न कर्यो नथी. आ प्रकरणनी जूनी प्रति क्यांयथी सांपडी नथी. क्यांक पार्श्वचन्द्रगच्छना भंडारोमां पडी पण होय, तो त्यां सुधीनी पहोंच नथी. प्रतीक्षा करवी रहे.

अलबत्त, नकल करवामां ज्यां क्यांक जरूर पडी त्यां डॉ. भायाणीनी प्रतिलिपिनुं उपजीवन अवश्य कर्युं छे, तो क्यांक सारा सुधारा पण लाध्या छे. जे प्रतिनो उपयोग थयो छे तेनी पुष्पिका ते स्थळे मूकीज छे.

आ प्रकरण, उपर जणाव्युं तेम भाषा तथा मंत्र - ए उभय विज्ञाननी दृष्टिए अभ्यसनीय छे. घणो भाग तो मने पण समजायो नथी तेम लागे छे. कोई तज्ज्ञ विद्वान आवी महत्त्वपूर्ण कृतिनो 'अभ्यास' आपे तेवी कामना.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वाचक अक्षयचन्द्रगणि कृतं

मातृकाप्रकरमम् ।।

ॐ नमः पार्श्वाय ।।

बुद्ध्यर्थोऽयमभियोगः । प्रभुपादप्रसादावाप्तेः ।।१।।

स जयति भगवान् पार्श्वः, उपान्तिमजिनः । सर्वोत्कर्षेण वर्तते प्रवचनेऽपि पुरुषैरादानीयत्वात् तस्य ।।२।।

अपि चेदं किल सरस्वत्याः स्वरूपं, वक्ष्यमाणं तत्तं(त्त्वं) वाग्देवताया वेदितव्यम् ।।३।।

श्रेयोर्थसार्थ — — हः समुच्चै — विश्वेऽपि वर्णा निरगुर्यतोऽमी ।
स्वाभाविकोष्णीषविराजमानं ज्ञानाय जैनं वदनस्वरूपम् ।।

तत् ᳵ इति ।।४।।

पदावलीकोशमुशन्ति यद् वै, तत् पुस्तकं स्ताद् गुणवृद्धिसिद्ध्यै ।।

I□ इति ।।५।।

शास्त्रावतारेऽध्ययनादिसीमा रेखाद्वयं तद् दिशताद् विवेकम् ।।

यथा ।। इति ।।६।।

दोषा न सन्ति त्वयि, देव ! तुभ्यं, **विश्वें नमः सिद्ध**मुपास्महे त्वाम् ।
स्वामिन् ! स्वरत्वाभ्युदितोऽसि स त्वं, त्वं व्यंजनात्माऽसि पराश्रितोऽसि ।।

अत एवेत्थंकारं —

पदमात्रमपि स्वामिन् ! नास्त्यत्र भुवनत्रये ।
अर्थयुक्तिविचारेण, यद् भवन्तं न धावते ।। इति ।।७।।

पश्यत भोः ! पुण्यचित्ताः सभासदः !, पश्यन्तु भो भवन्तो विद्वद्वृन्दारविन्दमकरन्दरूपाः !, इह हि —

स्याच्छब्दशोधितं शुंभ-त्यकारादिश्रुताक्षरम् ।
अनन्ताणुमयस्कन्ध-समुत्थं योग्यतापथे ।।८।।

अपि च साध्विदमुच्यते —

अ आ इ ई मता देवि ! सरस्वति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ए (ऐ) च **ओ औ** च ।
कः ख-गौ घ-ङमित्यपि ।
च-छौ ज-**झ-ञ**मीहित्वा , **ट-ठौ** ड-**ढ-ण**मीहसे ॥
त-थौ द-**ध-न**मूहित्वा **प-फौ ब-भ-म**मूहसे ।
मातर्य-**र-ल-वाः** ख्याता-स्त्वया **श-ष-स-हाः** क्रमात् ॥
अं अः [१]कंठ्याः प्लुतश्चेति, त्वदीहा विश्ववेशिनी ॥९॥
किं च –
लिपिमन्तः परे चेति वर्णा निगदिता द्विधा ।
अ आ इ ई उ ऊ इत्यादि १।
बहुवचनं प्लुतबहुत्वार्थम् २। १०॥
स्वपराश्रयतः प्रोक्ता द्वेधा लिपिमतां गतिः ॥

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ । क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व श ष स ह १। अं अः)(कंठ्य २। ११॥

स्वर-व्यञ्जनतो द्वैधं स्वाश्रिताः पर्युपासते ॥
अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ १।

कखगघङ, चछजझञ, टठडढण, तथदधन, पफबभम, यरलव, शषस, ह, २। १२॥

समान-सन्ध्यक्षरतः स्वरभेदद्वयी भवेत् ॥१३॥
तत्र -
अ-आ, इ-ई, उ-ऊ चैव, **ऋ- ॠ , ऌ-ॡ** इति स्फुटम् ।
द्वाभ्यां द्वाभ्यां **समानानां**, प्रणीताः पञ्च जातयः ॥१४॥
ए-ऐ, ओ-औ, चतस्रोऽमूः, स्युः **सन्ध्यक्षर**जातयः ॥१५॥
मात्रात्वेन भवन्तोऽमी, व्यञ्जनानां वरीयसाम् ।
विराजन्ते यथायोग-मलङ्कारा नृणामिव ॥

---

१. कँ (x)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क का कि की कु कू कृ कॄ क्लृ क्लॄ के कै को कौ कं कः इत्यपि स्वाश्रितत्वात् ॥१६॥

औपर्यन्ता इकाराद्या **नामित्वे** विदिताः स्वराः ॥

इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ लॄ ए ऐ ओ औ ॥१७॥

स्थान-स्वरूप नमना-न्नामिनो भयथा (?) मता(:) ॥१८॥

इदादेः प्रथमैव स्यात् ,

कि [कि की] की, कु कु कू कू कृ कृ कॄ कॄ क्लृ क्लृ क्लॄ क्लॄ
॥१९॥

एकारप्रभृतेः परा ॥

के के कै कै को[को] कौ कौ ॥२०॥

वर्ग्यावर्ग्यविमर्शेन द्वेधा व्यञ्जनसंमतिः ॥

कखगघङ, चछजझञ , टठडढण , तथदधन , पफबभम १।

यरलव , शषस, ह २ ॥२१॥

पञ्चभिः पञ्चभिः पञ्च **वर्गाः** कु-चु-टव स्तु-पू ॥२२॥

कौ क-खौ ग-घ-ङा श्चोक्ताः, २३॥, **चौ** च-छौ ज-झ-ञास्तथा ॥२४॥

टौ ट-ठौ ड-ढ-णाश्चाप्ताः, २५॥, **तौ** त-थौ द-धनाः पुनः ॥२६॥

पौ प-फौ ब-भ-माश्चैव प्राज्ञपुङ्गवशिष्टितः ॥२७॥

अवर्ग्या द्विप्रभेदाः स्यु-**रन्तस्थोष्म**विचारतः ॥२८॥

चतुर्द्धा ते **य-र-ल-वैः** प्राञ्चः २९, **श-ष-स-हैः** परे ॥३०॥

व्यञ्जनस्याऽन्तलभ्यत्वात् स्वाश्रितत्वं विशिष्यते ।

अनारुह्य समीपोऽपि मा(अ?) श्ववार इतीर्यताम् ॥

स्वरगौरवहेतुत्वा-न्नेदं दीनदरिद्रवत् ।

विभाव—पर्यय—स्फूर्ति छायावदभितः श्रयत् ॥

अत एवेत्थंकारं –

लघुर्यदि पुरः कृत्वा, व्यञ्जन(नो ?) गुरुतां गतः ।

फलवान् वीतरागेऽपि विनयः प्रा[ग् ?] भवैषिणाम् ॥३१॥

अं अः क्रमानुस्वार-विसर्गौ)(कंठ्य एव तु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिह्वामूल उपध्मेति चत्वारोऽपि पराश्रिता: ॥३२॥
शिरोबिन्दु-पुरोबिन्दू वज्रवद् गजकुम्भवत् ।
वर्णाकारविद: प्राहु-रमीषामाकृतिक्रमम् ॥
अनुस्वारादिकादीनां योऽधिक: कोऽपि कल्प्यते ।
उच्चारश्च सुखोच्चार-स्तदधीनस्तत: स **इत्** [३३ ?]
ज्यायस्त्वा**द-क-पा** एव प्रयुक्तास्तत्र तात्त्विकै: ।
लोकानुग्रहलोप: स्याद् बहुत्वे भेददर्शनात् ॥
व्यवहारा: प्रवर्तन्ते शलभीयगतिर्यथा ।
पंचमत्वादिनोदादि-रिति वर्गादिदेशक: ॥३४॥
अनुस्वारो विसर्गश्च, पृष्ठत: स्वरमिच्छत: ।
जिह्वामूलमुपध्मा च स्वरं व्यञ्जनमन्तरा ॥
क-खावेव श्रये जिह्वा-मूलीय: पुरतो गमौ ।
उपध्मानीयनामा तु **प-फा** वेवेयमौचिती ॥३५॥
अनुस्वारस्य तद्वन्त-मुपध्मानीयमूष्मसु ।
रेफे च सति मन्यन्ते च्छान्दसा: स्वैरिबुद्धय: ॥
यतस्ते –
अलाबुवीणनिर्घोषो दन्तमूल्यस्वरानुग: ।
अनुस्वारस्तु कर्तव्यो नित्यं ह्रो: शषसेषु च ॥

गणपतिं ७ं हवामहे । ब्राह्मणानां ७ं राजा । अ ७ं शुनाति । सुची ७ं षत् । त्व ७ं सोम: ॥३६॥

ननु –
त्रिषष्टिश्चतु:षष्टिर्वा वर्णा: संभवतो मता: ।
प्राकृते संस्कृते वापि स्वयं प्रोक्ता: **स्वयम्भुवा** ॥
स्वरा विंशतिरेकश्च,

अ आ आ इ ई ई उ ऊ ऊ ऋ ॠ ॠ ऌ ॡ ॡ ए ऐ ऐ ओ औ औ ॥

स्पर्शानां पञ्चविंशति: ।
यादयश्च स्मृता ह्यष्टौ चत्वारस्तु यमा: स्मृता: ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुं खुं गुं घुं ॥

अनुस्वारो विसर्गश्च)(क ≍पा चापि पराश्रयौ ।

दुःस्पृष्टश्चेति विज्ञेय लृकारः प्लुत एव च ॥

तदेतदल्पीयः । कथं चतुःषष्टिरिति भवतामपि ॥

व्यञ्जनानि त्रयस्त्रिंशत् स्वराणां सप्तविंशतिः ।

नवानां त्रित्वात् ॥

चत्वारोऽयोगवाहाश्च वर्णसंख्या प्रकीर्तिता ॥३७॥

अत इदम् –

वादे गुम्फे च लिखने वर्तते यस्य नौचिती ।

गृहकोणगतप्रायं प्रतीतं **वैदिकं मतम्** ॥३८॥

अथ नं ≍पाही त्याद्यपि ॥

नृनित्यतः पे सति यः सकारः, सूते विसर्गं स च सौत्युपध्मां ।

द्वय्यप्यसौ काप्यपवादभूता–नुस्वारमेव स्वरवद् विवेद ॥

यस्माद् बहवः –

चतुर्णामपि सूत्राणा–मितिशब्दः पुनः पुनः ।

स्वरत्वं व्यञ्जनत्वं च स्वसंज्ञत्वमपीष्यते ॥३९॥

क्रियामात्रत्वमाहृत्य स्वरणं व्यक्तिराश्रयः ।

त्रितयं नैकवर्त्येव न यो(मो)दाय विपश्चिताम् ॥४०॥

सर्वोदाहरणस्य –

व्यूढा ज्ञानोष्म–झंझा भुवनतरुफलं कर्म–कक्षाऽग्निरर्हन्

बुद्ध्युत्था वाङ्मयाब्धिर्विटपितकरुण)(खण्डिताशेषशाठ्यः ।

स्वच्छः श्लाघैकमूर्ति≍प्रकृतिपरतैश्वर्यपीनः स्फुटौजा

नृदो नृणां स्थितार्चः स भवति भगवान् क्लृप्तसर्वार्थसिद्धिः ॥४१॥

असवर्णतयोच्यन्त–ऊष्म–रेफ–पराश्रिताः ॥

र श ष स अं अः)(क≍प ॥४२॥

तुल्यस्थानास्य–यत्नाभ्यां सवर्णः शेषसंग्रहः ॥४३॥

अनन्यत्रोदितैदादेः सवर्णत्वप्रयोजनम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोकः क्वापि गतो मित्रं स्वपदे प्रेरयत्यपि ॥
सन्धिभागविपर्यासान्न लिपिस्तस्य साधनम् ।
इवर्णादाववर्णाद्वा विधिर्मोघस्तु भेदतः ॥
एकारस्य न कंठ्यत्वं नापि तालव्यतैषयत् ।
कंठ-तालव्यतायुक्ते-विजातिर्नरसिंहवत् ॥
अ-कादेर्न कथं स्वत्वं स्थानतो यदि केवलात् ।
वक्त्रप्रयत्नादिति चे-ददिदादेः कथं न तत् ? ॥
संमत्यैव शकारादेः प्रकारोऽयं निवारितः ।
यतस्तावदुदासीनो न स्वदेहेऽपि मूर्च्छति ॥४४॥

अथवा साध्विदमुच्यते –

अदेकार-क-यादीनां सावर्ण्य-निगद-क्रमः ।
जात्योच्चरितसर्गेण वर्गेण स्वयमेव च ॥

अ आ । आ आ । अ अ । आ अ ॥

यस्मादाहुः –

क्रमोत्क्रमस्वरूपेण लघूनां लघुभिः सह ।
गुरूणां गुरुभिः सार्धं लघूनां गुरुभिः सह ॥
गुरूणां लघुभिः सार्द्धं चतुर्धेति सवर्णता ।

एवं - **इ ई । उ ऊ । ऋ ॠ । लृ ॡ ।** इति जातेः ।१। **ए ऐ । ओ औ ।** उच्चरितेन ।२।

क क । क ख । क ग । क घ । क ङ। ख क । ख ख । ख ग । ख घ । ख ङ। ग क । ग ख । ग ग । ग घ । ग ङ। घ क । घ ख । घ ग। घ घ । घ ङ। ङ क । ङ ख । ङ ग । ङ घ । ङ ङ ।१। च च । च छ। च ज । च झ । च ञ । इत्येवं मकारान्ताः । वर्गेण ३। य य । ल ल । व व । स्वयम् ४ ॥४५॥

ह्रवर्जितव्यञ्जनमाश्रयन्ती द्विताऽस्ति तत्त्वादुपचारतश्च ।
ह्रस्य द्वयी तूच्चरितुं न शक्या र-योर्दुरुच्चारणमेव दोषः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्क क्ख ग्ग ग्घ ङ्ङ । च्च च्छ ज्ज ज्झ ञ्ञ । ट्ट ट्ठ ड्ड ड्ढ ण्ण । त्त त्थ द्द द्ध न्न । प्प प्फ ब्ब ब्भ म्म । य्य । र । ल्ल । व्व । श्श । ष्ष । स्स । ह । ४६॥

परमार्थद्विता सैव या विकुर्वितमूर्तिवत् ।
अर्क्क-मूर्क्खा-र्ग्गला-र्घ्घाश्च, क्रुङ्ङु दोर्च्चनमूर्च्छनम् ।
ऊर्ज्जो झर्ज्झति गीर्ञ्ञत्वं पट्ट्यो मड्डयनड्डयया: ॥
धुड्ढंढी पर्ण्ण वार्त्तार्त्थ-मर्द्द-गर्द्धा-महन्नयम् ।
अर्प्पणं गीर्प्फलं चैव शर्ब्बरी गर्ब्भितोर्म्मय: ॥
मर्य्यादा दुर्ल्लयौ सर्व्व: पार्श्शं वर्ष्ष्म चमस्स्यसौ ॥४७॥
अपरा तूपचारेण सदृशाकारबन्धुवत् ।
दृक्कला वाक्खर: प्राग्गी-र्वाग्घरि: प्राङ्ङकारता ।
तच्चरं तच्छलं तज्जं तज्झर-स्तञ्ञताऽट्टनम् ।
विट्ठलश्चुड्डुतड्ढारौ षण्णां तत्तोत्थ-तद्दया ॥
तद्धी-तन्नीक कुप्पोषा-प्फला-ब्बल-ककुब्भरा: ।
अम्मयाय्यय-तल्लक्ष्मी-संव्वत्सरवयश्शया ॥
कष्षाडव-यशस्साधु-इत्येवं द्वित्वदर्शनम् ॥४८॥
प्रथमै: स्याद् द्वितीयानां द्वितासिद्धि: प्रसिद्धित: ॥

क्ख, च्छ, ट्ठ, त्थ, प्फ ।४९॥

तृतीयैस्तु चतुर्थानां ,

ग्घ, ज्झ, ड्ढ, द्ध, ब्भ ॥५०॥

तैस्तैरपि च कुत्रचित् ।

ख्ख, छ्छ, ठ्ठ, थ्थ, फ्फ, घ्घ, झ्झ, ढ्ढ, ध्ध, भ्भ। अल्पतरप्रयोगत्वात् ।५१॥

अकृत्वा गर्विताकारं परेभ्यो वृद्धिदायिनाम् ।
महतामङ्ग संसारे रीतिरस्ति रकारवत् ॥
णादीनां द्वित्वहेतुत्वाद् हकारोऽप्येवमस्ति चेत् ।
अल्पत्वादप्रसिद्धत्वात् तत्प्रयोगस्य नाऽऽदर: ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पररक्षापटू रेफो प्रशिष्टां प्रत्ययार्हताम् ।
प्राप्तो यदि तदा सत्यं सन्तः सत्त्वदयालवः ॥५२॥
अघोष-ण-न-मा-ऽन्तस्थाः ककारस्य पुरस्सराः ।

क्क क्ख । क्च क्छ । क्ट क्ठ । क्ण । क्त । क्थ । क्न । क्प क्फ क्म । क्य क्र । क्ल क्क । क्श क्ष क्स ॥

सिक्करो दिक्खरो वाक्च दिक्छी वाक्टी किं क्रकृताः (?) ।
वृक्णा क्त सक्थि शक्नोति दिक्पालाक्फल रुक्मिणः ॥
वाक्ये क्रिया क्लमं पक्क वाक्शूरो यक्ष दिक्सरः ॥५३॥
ख-घ-धां न-म-यु र्वः स्युः ,

ख्न ख्म ख्य ख्र ख्व । चख्नुः । नानख्मि । संख्या । विख्रः । आख्वयं ॥५४॥

ग-ड-बां ब-त-नादिनः ।

ग्ग ग्घ ग्ङ ग्ज ग्झ ग्ञ ग्ड ग्ढ ग्ण ग्द ग्ध ग्न ग्ब ग्भ ग्म ग्य ग्र ग्ल ग्व ग्ह ॥

दिग्गे वाग्घृत वाग्ङत्व-दृग्ज-वाग्झर-सिग्ञताः ।
वाग्डम्बर-मुदग्ढक्का-रुग्ण-ऋग्दण्ड-दिग्धनम् ॥
मग्न-दिग्बल-ऋग्भीति-र्वाग्मि-भाग्याग्र-दिग्लताः ।
स्रग्विणी-वाग्हरिश्चैवं गाग्रणीनां विभा[व]ना ॥

ड्ग ड्घ ड्ङ । ड्ज ड्झ ड्ञ । ड्ड ड्ढ ड्ण । ड्द ड्ध ड्न । ड्ब ड्भ ड्म । ड्य ड्र ड्ल ड्व ड्ह ॥

खड्ग षडित्यतो घस्र-ङाशा-जनन-झंक्रिया: ।
ञार्थन-डाकिनी-ढौकी-णाकृतिर्दम-धी-नयाः ॥
बालिका-भू-मनो-योधा रमा-लक्ष्मी-वशा-हयाः ॥

ब्ग ब्घ ब्ङ । ब्ज ब्झ ब्ञ । ब्ड ब्ढ ब्ण । ब्द ब्ध ब्न । ब्ब ब्भ ब्म । ब्य ब्र ब्ल ब्व ब्ह ॥

अबगः । अबित्यतो घस्रादयः ॥५५॥
च-छ-ञ-म्यवशाश्चस्य,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

च्च च्छ च्ञ च्म च्य च्व च्श ॥

उच्चा-च्छ-याच्ञा-वावच्मो वाच्यं वच्वोल्लसञ्च्शयः ॥५६॥

छ-ढोर्मयर्वः ॥

छ्म छ्य छ्र छ्व । पोपुच्छ्मि । वांछ्यम् । उच्छ्रीः । पोपुच्छ्व ः ।

ढ्म ढ्य ढ्र ढ्व । जाघाढ्मि । आढ्यम् । मेंढ्रम् । कृषीढ्वम् ॥

अथ जस्य ज-झ-ञ-ह-पि ॥

ज्ज ज्झ ज्ञ ज्म ज्य ज्र ज्व ज्ह । मज्जा । सज्झम्पा । ज्ञानं । वावज्मि । आज्यम् । वज्रम् । उज्ज्वलम् । अज्हलौ ॥५८॥

झ-फ योर्मयवम् ॥

झ्म झ्य झ्व । जाझर्झ्मि । जाझझ्र्यात् । जाझर्झ्वः ॥

फ्म फ्य फ्व । रारफ्मि । ररफ्यात् । ररफ्वः ॥५९॥

टस्याऽघोष-र-ल-पि ॥

ट्क ट्ख ट्च ट्छ ट्ट ट्ठ ट्त ट्थ ट्प ट्फ ट्म ट्य ट्र ट्व ट्श ट्ष ट्स ॥

षट्कम् । षट्खनित्रम् । विट्चरः । त्विट्छाया । पट्टम् । विट्ठलः । षट्तयम् । धृट्थुर्वति । लिट्पतिः । तत्त्वप्राट्फलम् । पापट्मि । लुट्चम् । राष्ट्रियः । वेट्लाट्यति । पट्वी । षट्शम् । वषट्षण्णाम् । षट्सु ॥६०॥

ठस्य ण-म-य-विति ॥

ठ्ण ठ्म ठ्य ठ्व ॥ **हिठ्णाति । पापठ्मि । पाठ्यम् । पापठ्वः** ॥६१॥

तस्य क-ख-त-थ-न-प-फ-म-य-र-व-ष-सम् ॥

त्क त्ख त्त त्थ त्न त्प त्फ त्म त्य त्र त्व त्ष त्स ॥

तत्कम् । सत्खु । वित्तम् । तुत्थम् । रत्नम् । चित्पतिः । मुत्फलम् । आत्मा । सत्यम् । त्रयम् । सांत्वनम् । तत्षण्णाम् । वत्सरः ॥

[थस्य म-य-वम् ॥

थ्म थ्य थ्व ॥ पा]पथ्मि । पथ्यम् । पापथ्वः ॥६२॥

दस्य ग्वच्चुदु मुक्त्वा ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्र द्ध द्ङ द्द द्ध द्न द्ब द्भ द्म द्य द्व द्ल द्व द्ह ॥

मुदित्यतोऽज-झ-ञ-ड-ढ-णो-नाः ॥६३॥

चु-टु-ल-शवर्जास्तु नस्य ॥

न्क न्ख न्ग न्घ न्ङ । न्त न्थ न्द न्ध न्न । न्प न्फ न्ब न्भ न्म । न्य न्र न्व न्ष न्स न्ह ॥

सन्नत्यतो(तः) कर-खर-गर-धर्म-ङ्ता-त्सरु-पन्थः-दर-धर-नर-पर-फल-बल-भर-माल-यत्न-रत्न-वर-षट्क-सुर-हराः ॥६४॥

पस्य पुनः श्वासि-ण-न-म-मन्तःस्थाः ॥

प्क प्ख प्च प्छ प्ट प्ठ प्ण प्त प्थ प्न प्प प्फ प्म प्य प्र प्ल प्व प्श प्ष प्स ॥

ककुप् शब्दात् क्रिया-खनि-चेष्टा-छल-टीका-ठत्वं । **तृप्णोति । सुप्तः। ककुप्थूत्कारः । स्वप्न । अप्पित्तम् । अप्फलम् । पाप्मा । रूप्यम् । क्षिप्रम्। प्लीहः । त्रप्विदम्** ॥६५॥

म-न-मन्तस्था भकारस्य ॥

भ्म भ्य भ्र भ्ल भ्व । हभ्नाति । लालम्भि । लभ्यम् । शुभ्रम् । भ्लक्षति । भ्वादयः ॥६६॥

मस्य पु-ण-न-हा-न्तस्थाः ॥

म्ण म्न म्प म्फ म्ब म्भ म्म म्य म्र म्ल म्व ॥ अर्यम्णः । आम्नातं । किम्पचति । किम्फलति । किम्बलम् । तम्भरति । अम्मयः । रम्यम् । कम्रम् । म्लानिः । किम्वक्तम् । किम्ह्वलति ॥६७॥

रेफ-सकारो निता रकारस्य ॥

र्क र्ख र्ग र्घ र्ङ । र्च र्छ र्ज र्झ र्ञ । र्ट र्ठ र्ड र्ढ र्ण । र्त र्थ र्द र्ध र्न । र्प र्फ र्ब र्भ र्म । र्य र्ल र्व र्श र्ष र्ह ॥

अर्कादयः । गीर्ङ्ता । अर्चादयः । अमार्ट् । गीर्ठता । अमार्ड् । धूर्ढुढ्यादयः । निर्नयः । अर्पणादयः । अर्हन् ॥६८॥

शाश्च छ-न-म-शा-न्तस्थाः ॥

श्च श्छ श्न श्म श्य श्र श्ल श्व श्श ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्च्युतिः । कश्छादयति । अश्मः । वश्यम् । श्रीः । श्लीलः । श्वा । कश्शूरः ॥६९॥

क-ट-ठ-ण-प-फ-म-य-व-षाः षस्य ॥

ष्क ष्ट ष्ठ ष्ण ष्प ष्फ ष्म ष्य ष्व ष्ष ॥

शुष्कम् । षष्टः । षष्ठः । विष्णुः । सर्पिष्पाशम् । निष्फलम् । शुष्म । वृष्यम् । लालष्वः । कष्षण्डे ॥७०॥

षोनं सस्य त व त् ॥

स्क स्ख स्त स्थ स्न । स्प स्फ स्म स्य स्त्र स्व स्स ॥

स्कन्दः । स्खलन । अस्ति । स्थानम् । स्नानम् । बृहस्पतिः । आस्फालः । अस्मि । रस्यम् । विस्त्रहा । स्वं । कस्साधुः ॥७१॥

ण-न-मा-न्तस्था हस्य ॥

ह्ण ह्न ह्म ह्य ह्र ह्ल ह्व ॥

पूर्वाह्णेतरे । मध्याह्नः । जिह्मम् । सह्यः । ह्रीः । आह्लादः । ह्वयति ॥७२॥

केन शेषाणां वि-तु-र्आं ङ-ञ-ण-य-व-लामिति ॥

ङ्क ङ्ख ङ्ग ङ्घ ङ्ङ । ङ्च ङ्छ ङ्ज ङ्झ ङ्ञ । ङ्ट ङ्ठ ङ्ड ङ्ढ ङ्ण । ङ्त ङ्थ ङ्द ङ्ध ङ्न । ङ्प ङ्फ ङ्ब ङ्भ ङ्म । ङ्य ङ्र ङ्ल ङ्व । ङ्श ङ्ष ङ्स ङ्ह ॥

प्रत्यङ्ङित्यतः क-ख-गी-घृत-ङत्व-चीर-च्छद-जू-झर-ताटंक-द्वार्थ-डम्ब-ढुंढि-ण-तात-रुथत्व-देव-धर्म-नी-पू०फाल्गुनी-बोल-भीम-मद-यत-रत-लता-वार्ता-शर-षष्ट-सह-हराः १।

ञ्क ञ्ख ञ्ग ञ्घ ञ्ङ । ञ्च ञ्छ ञ्ज ञ्झ ञ्ञ । ञ्ट ञ्ठ ञ्ड ञ्ढ ञ्ण । ञ्प ञ्फ ञ्ब ञ्भ ञ्म । ञ्य ञ्र ञ्ल ञ्व । ञ्श ञ्ष ञ्स ञ्ह ॥

लिखितञित्यतः कादयस्त-थ-द-ध-न रहिताः ॥२॥

ण्क ण्ख ण्ग ण्घ ण्ङ । ण्च ण्छ ण्ज ण्झ ण्ञ । ण्ट ण्ठ ण्ड ण्ढ ण्ण । ण्त ण्थ ण्द ण्ध ण्न । ण्प ण्फ ण्ब ण्भ ण्म । ण्य ण्र ण्ल ण्व । ण्श ण्ष ण्स ण्ह ॥

सुगण्णित्यतः कादयः ॥ ३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

य्क य्ख य्ग य्घ य्ङ। य्च य्छ य्ज य्झ य्ञ । य्ट य्ठ य्ड य्ढ य्ण । य्त य्थ य्द य्ध य्न । य्प य्फ य्ब य्भ य्म । य्य य्र य्ल य्व । य्श य्ष य्स य्ह ॥

सदयित्यतः कादयः ॥४॥

ल्क ल्ख ल्ग ल्घ ल्ङ । ल्च ल्छ ल्ज ल्झ ल्ञ । ल्ट ल्ठ ल्ड ल्ढ ल्ण । ल्त ल्थ ल्द ल्ध ल्न । ल्प ल्फ ल्ब ल्भ ल्म । ल्य ल्र ल्ल ल्व । ल्श ल्ष ल्स ल्ह ॥

कमलित्यतः कादयः ॥५॥

व्क व्ख व्ग व्घ व्ङ । व्च व्छ व्ज व्झ व्ञ । व्ट व्ठ व्ड व्ढ व्ण । व्त व्थ व्द व्ध व्न । व्प व्फ व्ब व्भ व्म । व्य व्र व्ल व्व । व्श व्ष व्स व्ह ॥

सुदेवित्यतः कादयः ॥६॥ ७३॥

ख-फ-छ-ठ-थस्य तु श-ष-सपि ॥

विपरीतग्रहणं क्वचित्कताज्ञापनार्थम् ॥

ख्श ख्ष ख्स । फ्श फ्ष फ्स । छ्श छ्ष छ्स । ठ्श ठ्ष ठ्स । थ्श थ्ष थ्स ॥

अख्शरः । प्राङ्ख्षष्ठः । अख्सरः । अछ्सरः । सुगण्ठ्साधुः । वथ्सरः। इत्यादि ॥७४॥

शिक्षा तु सर्वगता ॥

क्ग क्घ क्ङ इत्यादि ॥

नहि शिक्षायाः किमप्यगोचरम् ॥ सर्वमप्येतल्लक्ष्यमिति निर्देशात् ॥७५॥

[१] नखा - [२] ङ्कै - [३] नखै - [४] ऋतवः [५] सर्वे - [६] र्षि - [७] फणि - [८] सिद्धयः ।

[९] वेदे - [१०] सद्म - [११] पुराण - [१२] श्वे - [१३] नख - [१४] भूता - [१५] खिला स्तथा ॥

[१६] अघोष - [१७] हय - [१८] पूर्व - [१९] र्त्तु - [२०] शवला - [२१] विंशति - [२२] नयाः ।

[२३] नख - [२४] राग - [२५] हराः - [२६] सर्व - [२७] सत्रिंश - [२८] दखिला - [२९] खिलाः ॥

[३०] नन्द - [३१] दिग् - [३२] मास - [३३] मुनयः संभवन्तः क्रमादमी ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कादितः संगृहीताः स्यु - रग्रण्यः पदपण्डितैः ॥७६॥

सिद्धाः पंचकपर्यन्तं संयोगाः पदगोचरे ॥

श्रीः । श्र्यादिः । लक्ष्म्यः । कात्स्न्र्यम् ॥७७॥

सप्ताक्षरोऽप्यवयवः 'कात्स्न्र्य' मित्यादिलम्भनात् ॥

अ । क । स्म । क्ष्मा । दाक्ष्यम् । लक्ष्म्याम् । कात्स्न्र्यम् । अन्यत्र **ह्म्ल्व्र्यौं** ॥७८॥

नानालिखनराभस्याः केऽपि स्वेन परेण वा ॥७९॥

यथा अ-ज-ड-भ-शम् । ऽ अ । ज ज्ज । [illegible] ड । [illegible] भ । [illegible] श ॥८०॥

थश्च व्युत्क्रमो विशेषार्थः ॥

थ [illegible] । [illegible] [illegible] ॥८१॥

ञ-षाद्यास्तु ज-कादितः ॥

[illegible] (क्ष) [illegible], [illegible] । [illegible] ज्ञ ॥८२॥

ककार एवोकारादि समान-थ-न-रे ल-षोः ॥

कु कू कृ कॄ क्लृ क्लॄ [illegible] **क्न क्र क्ल क्ष** ॥८३॥

परवत् केऽप्यदूरेण माऽतोऽस्त्वनवधानता ॥८४॥

वपुरीह डकारादे-र्मकारादितया त्वरा ॥

ड म, स भ, न त, ठ छ, ब व, क फ, प ष, न ल । ठ ट लृ । ट ड ङ । ट ढ द ह । ख व च । य थ घ थ ध । झ ज न । उ ओ औ । ए ए (ऐ)। इत्यादि ॥८५॥

गुरवो द्विप्रकाराः स्यु-रुपाधेः स्वत एव च ॥८६॥

उपाधिर्द्विविधः सीम-योगाभ्यां परिभाषितः ॥८७॥

प्राहुः पदस्य वाक्यस्य पादस्य शकलस्य च ।

अन्यत्र तगणादिभ्यः सीमामपि चतुर्विधाम् ॥८८॥

वाक्ये पदानां पदेषु वा वाक्यस्यान्तर्भाव एवेत्यल्पीयः ।

परकीयकर्णपीडाकारी श्रवणातिरोगरुग्णः स्यात् ।

इति नैगमोपदेशं भिन्नतया स्पृहयति स्कन्धात् ॥

देव १ । मुनिर्मानितो भवति २ ॥८९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दलयोर्न मिथः सन्धिः पादौ स्यातां पृथग् यती ।
इत्यर्धचरणस्थित्या रेखे रेखा च वादिनी ॥
तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ ! ॥१॥
तेषां च देहोऽद्भुतरूपगन्धो निरामयः स्वेदमलोज्झितश्च ॥९०॥

यस्त्वपवादः –
आदि–मध्या–न्तभागेषु भ–ज–सामस्ति गौरवम् ।
लाघवं य–र–तामास्ते म–नोर्गौरव–लाघवम् ॥
कर्णः करतल एव च, पयोधर श्चलन–विप्रनामानौ ।
आर्या गणा गुरू स–ज–भवच्चतुर्लध्विति प्राप्ताः ॥

ते चेमे –

ऽ ॥ भः ।१।, ।ऽ। जः ।२।, ॥ऽ सः ।३।, । ऽऽ यः ।४।, ऽ । ऽ रः ।५।, ऽऽ । तः ।६।, ऽऽऽ मः ।७।, ॥। नः ।८।

ऽऽ कर्णः १, ॥ ऽ करतलः २, । ऽ । पयोधरः ३, ऽ ॥ चलनः ४, ॥– ॥ विप्रः ५ इति ॥

आदिशब्दाद् गुरु–लघ्वादिग्रहः । त ग्रहणं स्वोपयोगार्थम् ।

दैवत । अवेहि । सततं । रमायै । देवता । जानि(नी?)हि । भावार्थी। वरद । देवे । (हे) विपुला । अपार । केवल । हितकर । सा । हु ।१।

श्रीर्जय । जिनैहि । स शमैत् । इयं ते । रक्ष मां । त्वं मेऽसि । सन्तस्तोंऽश(स्तोष ?) मिह । प्रार्ही । नहि भीः । जयोऽस्तु । सा तत् । त्वमवसि । कैः । य ।२॥

विवृजिन–मुनिजन–हितकर–मनुभवगुणविशदयशसमिह रमयेः ॥३॥

सुशील कला–कुल–कौशल देव
सुरासुर–मानव–निर्मित–सेव ।
मते तव देहि विभो ! मतिमेव
विराजति या किल चन्द्रकलेव ॥
अर्हदीयनामदामकुम्फने मनो ददीत यः
स मानितः सुधीषु भावुकं लभेत भूरि ॥४ ॥९१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गणानां गणोऽत्र ।

ल-द-त-च्-प-ष मेक-द्वि-त्रि-चतुः-पञ्च-षट्कलम् ।

मात्रा-गणभिदो भू-द्वि-त्रि-पञ्चा-ऽ ष्ट-त्रयोदशाः ॥१२॥

तथाहि –

लघुरेको मता रेखा(।) १३॥

गुरुर्दीर्घ इतीरितः (ऽ) १।

विदीर्घो लघुयुगलम् (॥) २॥ इति ॥१४॥

ल-ग-वत्तूर एव तु (।ऽ) १।

ल-ग वच्च विशेषः स्यात् (ऽ।) २।

न गणस्त्रि-लवत् पुनः (।।।) ।३॥

कथमयम् ? । प्रस्तावान्तरि[त]त्वादपुनरुक्तत्ववत् परे च ॥१५॥

कर्णादयो द्विगुर्वाद्याः ।

पंक्तिचरत्वादव्यासेन । ये हि –

ऽऽ १, ॥ ऽ २, । ऽ । ३, ऽ ॥ ४, ॥ ॥ ५, इति ॥१६॥

य वदिन्द्रासनं विदुः ।ऽ १।

र वत् सूर इति ख्यातः ऽ। २।

न-ग वच्चाटुरित्यहो ॥ऽ ३।

त वदाचक्षते हीरम् ऽऽ। ४।

स-ल वच्छेखरं तथा ॥ऽ ५।

ज-ल वत् कुसुमावस्था । ऽ ॥ ६।

भ-ल वत् प्रोदितोऽस्त्यहिः ऽ ॥ ७।

पगणो **न-ल-ला**त्मैव ।।।।। ८ ॥१७॥

म वच्च हरलक्षम् ऽ ऽ ऽ १।

स-गवच्छशिनस्तत्त्वम् ॥ ऽ ऽ २।

ज-ग वत् सूरमूचिरे । ऽ । ऽ ३।

भ-गवच्छक्रमाख्यान्ति ऽ ॥ ऽ ४।

शेषो **न-ल-ग**वत् स्मृतः ।।।। ऽ ५।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ल-त वद्धरिव स्यात् । ऽ ऽ । ६।
र-ल वत् कमलः किल ऽ । ऽ । ७।
ब्रह्मा **न-ग-ल** वत् सिद्धः ।।। ऽ । ८।
त-ल वत् कृष्टिकल्पना ऽ ऽ ।। ९।
कमठः **स-ल-लै**श्चिन्त्यः ।। ऽ ।। १०।
ल-भ-लैर्ध्रुवचिन्तनम् ऽ ।।। ११।
भ-ल-लैरिह धर्माख्यः ऽ ।।।। १२।
शालूरे लघुषट्तयः ।।।।।। १३। इति ।।९८।।

किं च –

नेन्द्रवंशादिवृत्तानां शैथिल्यं परिहीयते ।
अयुग्मचरणप्रान्ते गुरुत्वं नास्ति तल्लघोः ।।

तदेव नैवं –

कारुण्यकेलीकलितो जिनेशित –
रावेद्यसे त्रीणि जगन्ति तायिता ।
जिनेश्वरो नः सततं भवार्णव –
तरीतया तिष्ठति सुप्रतिष्ठितः ।।
जिनपतिर्भगवानुदितोदय –
दयितदाक्ष्यदयादिगुणः श्रिये ।। इत्यादि ।।९९।।
व्यक्तेर्येषां तामा (नाम ?) पुनरुक्तवदाद्रियेत ते योगाः ।
युक्ते प्राश्रिते वा व्यञ्जनमात्रे पुरःस्थे स्युः ।।
अक्षम् । इक्षुः । उक्षा । ऋक्ष । नृक्षितिः ।
अं । इं । उं । ऋं । लृं ।
अः । इः । उः । ऋः । लृः ।

क)(रोति । मुनि)(कुशलः । पटु)(कलावान् । ऋ)(कविः (?) नृ)(क्षतिः। कः⌒पचति । मति⌒पट्वी । साधु⌒पारगः । ऋ⌒पुरं लृ⌒पुत्रः।

अक् । इक् । उक् । ऋक् । लृक् । इत्यादि ।।१००।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आद्येकवृत्तेर्युक्तस्य ह्रादेर्योऽनुचरो लघुः ।
नैषोऽपि परवन् मन्द-प्रयत्नोच्चार एव चेत् ॥
षट्तर्कागमचक्रकर्कशलसद्वादीन्द्रमुद्राद्रुम -
श्रेणीदाहदवानलः कलिमलप्रध्वंसह्रींकारवत् ॥
तीव्रप्रयत्नोच्चारे तु-
पद्महृदमुखादेषा गङ्गाख्या सरिदुत्थिता ॥
आदिज्ञापनान्मैवं -
तव निद्रा समुपागमदुच्चकैः सुमुखि ! शीघ्रमशेमहि ते वयम् ॥
एकग्रहान्मैवं -
मरुद्रथः खलु वारिद ! राजते, गगनमण्डलभूपतिवद्भवान् । इत्यादि ॥१०१॥
समा समं समानोत्था समानेभ्यः समुत्थिताः ।
सन्ध्यक्षरपरेभ्यस्ता विधास्तिस्रः स्वयम्भुवाम् ॥१०२॥
'**आ**'कार मुख्याः खलु पञ्च दीर्घाः
समैः समानैर्जनिता भवन्ति ॥
आ । ई । ऊ । ॠ । ॡ ॥१०३॥
ए-ओ इति द्वौ विषमैर्भवेतां ॥१०४॥
समान-सन्ध्यक्षर जौ तु ऐ-औ ॥१०५॥
मैलः पयसि पयोवत् पयसि सलिलवच्च धान्यकणवच्च ।
ॡ(ॢ)दन्तेष्वेदादिषु संयुक्तव्यञ्जने क्रमशः ॥
अ अ इत्यत **आ** इत्यादि ॥ एवं ॡकारान्ताः ॥५॥
अइ १, आइ २, अई ३, आई ४, इत्यतः **ए** ।
अउ १, आउ २, अऊ ३, आऊ ४, इत्यतः **ओ** ।
अए १, आए २, अऐ ३, आऐ ४, इत्यतः **ऐ** ।
अओ १, आओ २, अऔ ३, आऔ ४, इत्यतः **औ** ॥१०६॥
द्वावकारौ य आकार इति माऽभिग्रहं विधाः ।
न मैत्रः संभवेच्चैत्रो चैत्रद्विगुणचेष्टया ॥
अ अपेहीति वाक्यं च क्वाऽदात् कृपणसत्कृतिम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वेर्द्वयस्यां(?)(स्याऽ)न्यतामात्रा-गणितेर्भ्रान्तिभञ्जिनी ॥
अदितौ नैवमेकारो न तद्देशस्य यः स्वरे ।
कौम्भसः पयसो भेत्ता हंसश्चेद् वृद्धिरस्त्यपि ॥१०७॥
आस्ते निरनुबन्धत्वे जातिर्जीवातुरग्रणीः ।
इत्यन्यपरिषत्प्राप्तौ जातिस्तमनुवर्तते ॥१०८॥
दीर्घे दीर्घोऽपि लीयेत, दीप्तिमध्येऽन्यदीप्तिवत् ।
न याति वपुरुत्सेधं यौवनानन्तरं नृणाम् ॥
अ आ, आ अ, आ आ, इत्यत **आ** इत्यादि ॥१०९॥
ख-ठ-च-ज्रे फ-श-ष-सा-श्छ कारस्थ-फतुर्यहः ।
योगवाहा विसर्गश्चाऽनुस्वार)(क≍पमेव च ॥
ख ठ च ज र श ष स छ थ फ घ झ ढ ध भ ह । अः अं)(क≍प ।
यथोत्तरत्वं भावः । खादयोऽपि स्वर(रं) व्यञ्जनं वाश्रित्यैव हु ॥११०॥
किं च –
लिविप्रवाह एवायं याऽनुस्वारपुरोऽटवी ।
नान्त्यव्यञ्जनतश्चित्रा-लङ्कारः परिहीयते ॥
क क का कं क कां का का
के कि के का कु का क कु प् ।
कौ कं कं क क को कै क –
का कं का क क का कु कां ॥
पकारस्याऽप्यदोषात् ॥१११॥
ड-ल योरप्यनुस्वार-विसर्गाभाव-भावयोः ।
ब-वयोः स-षयोरैक्यं यथायुक्ति रलोः शसोः ॥
त-नयोर्ण-नयोस्तद्वत् क्वचिदिच्छन्त्यलंक्रियाः ॥११२॥
घोषे दोषापनोदाय षकारस्य सकारता ॥
णकारस्य ना(न)कारत्वं जकारस्य गकारता ।
ष्ट ष्ण ज्ग (?) इति ॥११३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किमूष्मत्वात् किमादेशात् किं युक्तव्यवहारतः ।
षस्य सान्तरता मध्य-वृत्तेः किं वा विशेषणात् ॥
नादिरूहो – संत्यागात् प्रकीर्णत्वाच्च नापरः ।
गनान्तरत्वापातोऽस्तु तृतीये ज-णयोरपि ॥
न तुर्यो भूपयोगित्वाद् हकारस्त्वेष घोषवान् ।
कवर्गीयमपेक्ष्यैव तत्सिद्धेर्नास्ति पञ्चमः ॥
अथ हाविवृतस्यास्य संवृतत्वमिवेति चेत् ।
देवानुप्रिय ! तत् सम्यगृलोरपि वितर्कय ॥११४॥
नाभेरुपरि आक्रामन् विवक्षाप्रेरितो मरुत् ।
हृदाद्यन्यतमस्थानो प्रयत्नेन विधाय(र्य)ते ॥
विधार्यमाणः स स्थान-मभिहन्ति ततः परम् ।
ध्वनिरुत्पद्यते सोऽयं वर्णस्यात्मा वितर्कितः ॥११५॥
स्वरतः कालतश्चैव स्थानतोऽपि प्रयत्नतः ।
अनुप्रदानतश्चेति विभागस्तस्य पञ्चधा ॥११६॥
षड्जर्षभौ च गान्धारो मध्यमः पञ्चमस्तथा ।
धैवतश्च निषादश्च सप्तैते कथिताः स्वराः ॥११७॥
षड्जं मयूराः कूयन्ते गावस्त्वृषभनादिनः ।
अजादयश्च गान्धारं क्रोञ्चः क्वणति मध्यमम् ॥
उडरः पञ्चमं ब्रूते ह्रेषतेऽश्वस्तु धैवतम् ।
निषादं करिणो ब्रूयु-रेषा तेषामुदाहृतिः ॥११८॥
गान्धारश्च निषादः स्मृतावुदात्तेऽथ धैवतोऽप्यृषभः ।
द्वावनुदात्ते पञ्चम-मध्यम-षड्जास्त्रयः स्वरिते ॥११९॥
उच्चोच्चार उदात्तः स्या-न्नीचैरुच्चरितोऽपरः ।
स्वरितः समवृत्त्यैवो-च्चार्यमाणः स्वरो भवेत् ॥
अ० । अ० । अ० । इत्यादि ॥१२०॥
द्रुता विलम्बिता मध्या त्रिधेत्युच्चारवृत्तयः ।
अभ्यास उपदेशे च प्रयोगे च विनिश्रिता ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यथाक्रममिति ॥१२१॥

ह्रस्व-दीर्घ-प्लुता एक-द्वि-त्रिमात्रा यथाक्रमम् ।

अ इ उ ऋ लृ । ए १ ऐ १ ओ १ औ १ । आ ई ऊ ॠ लॄ ए ऐ ओ औ । आ ३ ई ३ ऊ ३ ॠ ३ लॄ ३ ए ३ ऐ ३ ओ ३ औ ३ इति ॥१२२॥

व्यञ्जनं त्वर्द्धमात्रं स्यात् ।

क ख ग घ ङ् इत्येवं हकारान्ताः ॥१२३॥

मात्राकालो निमेषकः ।

नेत्रस्पन्दनपरिमाण इत्यर्थः ॥१२४॥

परिपूर्णमनुत्पाद्य नार्द्धशब्दः प्रवर्तते ।

देशप्रदेशनिर्णीति-र्न स्कन्धेन विना यतः ॥१२५॥

पूर्विणोऽन्तुर्मुहूर्तेऽपि सर्वे सिद्धान्तपारगाः ।

रोगिणस्त्वक्षमा वक्तुं निमेषोऽन्यानपेक्षताम् ॥१२६॥

एकमात्रं वदेच्चाषो द्विमात्रं वक्ति वायसः ।

त्रिमात्रं बर्हिणो ब्रूयान्नकुलः सोऽर्द्धमात्रिकम् ॥१२७॥

स्मृत्वैव निनदाणूनां ह्रसनान्मुखदारणात् ।

आलोकान्तं प्लुतेश्चाहु-स्त्रैधमेषु समेष्वपि ॥१२८॥

दूरादामन्त्रणे प्रश्ने प्रश्नाख्याने च भर्त्सने ।

सम्मत्यसूयाकोपादौ यथायोगं स्वराः प्लुताः ॥

देवदत्त ३ एहि । जिनदत्त ३ किं करोषि ? । सोमदत्त ३ राजानं पश्यामि । इत्यादि ॥१२९॥

ऋकारं वर्जयित्वैकं सर्वस्यापि गुरोरिह ।

पर्यायेण प्लुतत्वं स्या-दपर्यन्तेऽपि तिष्ठतः ॥

दे ३ वदत्त । देव ३ दत्त । देवद ३ त्त । देवदत्त ३ ।

ऋकारवर्जनात् **कृ २ ष्टिः । वृ २ क्णं ।** इत्यादि ॥१३०॥

उरः कण्ठस्ततो जिह्वा-मूलं तालु च मस्तकम् ।

दन्ता ओष्ठौ च नक्रं च वर्णानामष्ट भूमयः ॥

नहि दन्तेन दन्ताभ्यां वार्थ सततो (वार्थस्ततो) बहुत्वम् ॥१३१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कण्ठ्या अकुविसर्गं हः, ।

अ आ क ख ग घ ङ ह अः ॥१३२॥

तालव्या इचवौ यशौ ।

इ ई च छ ज झ ञ य श ॥१३३॥

शीर्ष्या ऋटुरषा ज्ञेयाः, ।

ऋ ॠ ट ठ ड ढ ण र ष ॥१३४॥

दन्त्या लृतुलसास्तथा ॥

लृ ॡ त थ द ध न ल स ॥१३५॥

उपूपध्मा मता ओष्ठ्याः, ।

उ ऊ प फ ब भ म ≍ प ॥१३६॥

एदैतौ गलतालुजौ ।

ए ऐ ॥१३७॥

ओ औ कण्ठोष्ठजौ ॥१३८॥ **वस्तु**, दन्तोष्ठ्यः परिकीर्तितः ॥१३९॥

जिह्वामूलीयको जिह्व्यः, ।

)(**क** ॥१४०॥

अनुस्वारो नाशिकोदितः ।

अं ॥१४१॥

स्यादुरस्यो हकारश्चे-दन्तस्था-पञ्चमैर्युतः ॥

ह्ङ । ह्ञ । ह्ण । ह्न । ह्म । ह्य । ह्र । ह्ल । ह्व ॥१४२॥

आदा उच्चरणं यस्या व कार-ल-ड-णां यथा ।

न तथा मध्यतोऽन्तेऽपि द्वित्वसंयोगतो विना ॥

ययु-लीला-तिलादिभ्यो द्विरुक्तललितोऽपि च ।

यायाः, यायाः १ । वन्दे, देवं २ । लोलं , लोलं ३ । डिम्भः पण्डितः । नडः ४ । णीया । वणिक् ५ । क्रय्यं । इय्रतुः १ । सव्वं । काव्यं २ । मल्लः । शल्यं ३ । अड्डुति । जाड्यं ४ । पुण्णो । पुण्यं ५ । ययौ । येयीयते । यायाति । यियासति । अयीयपत् युः १ । व वौ २। ल लौ । ललति । लीला । तिलं ३ । डेडीयते ४ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विपरीतग्रहात्-**काव्यं । युयूषति । कल्पः ।**

क्वचित् समासैकपद्ये - **उद्यमः । प्रयोगः । निवातः । प्रलयः । प्रडीनः । प्रणवः ।**

उभयमपि क्वचित् - **अभियोगः । अभियोगः । प्रवीरः । प्रवीरः । मिलति । मिलति । तिमिंगिलगिलः** इत्यादि ॥१४३॥

परप्रीतिं विचिन्त्येव नहि विघ्नाय नाशिका ।
अतः कार्याय जायन्ते पञ्चमा अनुनाशिकाः ॥

ङ ञ ण न म ॥१४४॥

प्रयत्नाः स्थान-करणं स्पृशन्त्यन्योन्यतो यदा ।
स्पृष्टता, — ॥१४५॥

- ऽथ मनाक् स्पर्शादीषत्स्पर्शत्वमिष्यते ॥१४६॥

पार्श्वतः संवृतिः(१४७) दूराद् विवृतिः(१४८) स्पृशतां भवेत् ।(१४८॥)
अमी अन्तः प्रयत्नाः स्युः,

स्पर्शेषत्स्पर्श-विवृति-संवृतय इति ॥१४९॥

बाह्यानपि विचिन्तय ॥

विवार-संवारादीनिति ॥१५०॥

वायुश्चाक्रमणं कुर्वन् मूर्ध्नि प्रतिहतो यदा ।
निवृत्तोऽसौ तदा कोष्ट-मभिहन्याद् बलादपि ॥
कोष्टेऽभिहन्यमाने गलबिलविवृतत्वतो विवारः स्यात् ॥१५१॥
तत्संवृतभावो यदि संवारो भवति कविकथितः ॥१५२॥

तत्र वर्ग्याः स्पर्शाः ।

क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म ।

)(**क ≍ प**, एतौ तदाश्रयात् ॥१५३॥

याद्या ईषत्स्पर्शाः ॥

य र ल व ॥१५४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वरोष्मका विवृताः ।

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ । श ष स ह ॥१५५॥

विवृततरावेदोतौ ।

ए ओ ॥१५६॥

विवृततमा **ऐ** च **औ** च ॥१५७॥

विवृते जायते श्वासः ॥१५८॥

संवृते नाद एव च ॥१५९॥

एतावनुप्रदानत्वे सद्भिः कैश्चिदगीयेताम् ।

"श्वास-नादावनुप्रदाने" इति **केचित्** ॥१६०॥

अनु-प्रदीयते नाद-स्तथाभूते यदा ध्वनौ ।

घोषता भवति (१६१), श्वासानुप्रदाने त्वघोषता ॥१६२॥

प्रथमे श-ष-साश्चैव - ईषच् श्वासतया स्थिताः ।

क च ट त प, श ष स ॥१६३॥

द्वितीयाः स्युर्बहुश्वासाः ;

ख छ ठ थ फ ॥१६४॥

अघोषास्ते त्रयोदश ॥

क ख च छ ट ठ त थ प फ श ष स ॥१६५॥

महाघोषाश्चतुर्थाः स्युः पञ्चमान्तस्थमेव हः ।

घ ङ(झ)ञ ढ ण ध न भ म य र ल व ह ॥१६६॥

स्वल्पघोषास्तृतीयास्तु ,

ग ज ड द ब ॥१६७॥

ख्यातो घोषवतां गणः ॥

ग घ ङ ज झ ञ ड ढ ण द ध न ब भ म य र ल व ह ॥१६८॥

अल्पप्राणत्वमेतेषा-मल्पे मरुति निश्चितम् ॥

क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व ॥१६९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महति त्वन्यता (१७०), हन्त महाप्राणतयोष्मता ॥

इहैके —

ई(उ)भावश्च विवृत्तिश्च शषसा रेफ एव च ।

जिह्वामूलमुपध्मा च गतिरष्टविधोष्मणः ॥१७१॥

आदि-द्वितीय-श-ष-सा जिह्व्योपध्मा-विसर्गकाः ।

यमौ चादी अघोषाः स्युः प्राप्ता विवृतकण्ठताम् ॥

क ख च छ ट ठ त थ प फ श ष स)(क⌒प अः कुं खुं ॥१७२॥

गादयो विंशतिश्चैवा-नुस्वारश्चरमौ यमौ ।

संवृत्तकंठमिच्छन्तो घोषवन्तः समेऽप्यमी ॥

ग घ ङ ज झ ञ ड ढ ण द ध न ब भ म य र ल व ह अं गुं घुं ॥१७३॥

आद्यास्तृतीया वर्गाणां यमौ चादितृतीयकौ ।

अल्पप्राणा भवन्त्येते ,

क ग च ज ट ड प ब कुं गुं ॥१७४॥

महाप्राणा अतोऽपरे ॥

ख घ ङ छ झ ञ ठ ढ ण थ ध न फ भ म य र ल व श ष स ह अं अः)(क⌒प खुं घुं स्वराश्च ॥१७५॥

नाशिक्याः स्युरनुस्वारयमाः ।

अं कुं खुं गुं घुं ॥१७६॥ **इत्यपरागमः** ॥

अघोषादिनाशिक्यान्तानामेतत् प्रकारान्तरं **वैदिकेष्टं** वेदितव्यम् ॥१७७॥

प्रयत्नः सर्वगात्रानु-सारी तीव्रतया यदा ।

निग्रहः स्याच्छरीरस्य कंठरन्ध्रस्य चाणुता ॥

स्वर-वाय्वोस्तु रूक्षत्व-मित्युदात्तः स्वरूपितः ॥१७८॥

प्रयत्न(त्नो)मन्दगात्र[स्य], स्रंसनादेस्ततोऽपरः ॥१७९॥

संनिपातस्तयोर्यस्तु स्वरितः सोऽयमीरितः ॥१८०॥

प्रयत्नानुप्रदानाना - मेतत् किंचन लक्षणम् ॥

स्पर्शादि स्वरितपर्यन्तम् ॥१८१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिपाटी प्रयोग्यात्मा स्वाश्रितादपराश्रितः ॥

ह अं ॥१८२॥

स्वराद् व्यञ्जनम् ॥

औ का ॥१८३॥

एकीयादनेकीयः प्रसीदति ॥

लृ ए । घ ङ । झ ञ । ट ण । ध न । भ म लवत् ॥१८४॥

कंठ्य-तालव्य-मूर्धन्य-दन्त्यौष्ठ्यानां प्रतीतया ।

स्थानानुमतवृत्त्यैव पौर्वापर्यविवेकिता ॥

कु चु टु तु पु ॥१८५॥

कथं तर्हि 'अ इ उ ऋ लृ' इति नोक्तम् ? ॥

ऋ-लृ वर्णौ विजातीया-वपि सावर्ण्यमृच्छतः ।

उवर्णानन्तरं तेन हेतुना तौ प्रतिष्ठितौ ॥१८६॥

ह्रस्वाद् दीर्घो विनिर्देश्यः ॥

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ इत्यादि ॥१८७॥

प्राणैः स्वल्पान् महानपि ॥

व श ॥१८८॥

अवर्गीयस्तु वर्गीयात् ॥

म य ॥१८९॥

श्वासितो नादवानपि ॥

ख ग । छ ज । ठ ड । थ द । फ ब । स ह ॥१९०॥

ईषच्छ्वासाद् बहुश्वासः ॥

क ख । च छ । ट ठ । त थ । प फ ॥१९१॥

महाघोषोऽल्पघोषतः ॥

ग घ । ज झ । ड ढ । द ध । ब भ ॥१९२॥

आश्रयोत्पत्त्यपेक्षातो भावनीयाः पराश्रिताः ॥

अः)(का)(क≍प ।१। अं अः ॥१९३॥

स्वरा विंशतिरष्टौ च षट्त्रिंशद्व्यञ्जनानि च ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुष्कं शेषमित्यष्ट – षष्टिस्ते लिखनान्तरे ॥

अ अँ आ आँ इ इँ उ उँ ऊ ऊँ ऋ ऋँ ॠ ॠँ लृ लृँ ॡ ॡँ ए एँ ऐ ऐँ ओ ओँ औ औँ। क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य यँ र ल लँ व वँ श ष स अं अः)(क ≍ प ॥१९४॥

अनुनाशिकेऽग्रगेऽपि स्वरः समर्थोऽनुनाशिकत्वाय ॥

'अपि'शब्दात् स्वतश्च ।

साम सामँ। दधि दधिँ। मधु मधुँ। कर्तृ कर्तृँ। प्रियक्लृ प्रियक्लृँ। भवाँश्चारुः। इत्यादि ॥१९५॥

य–व–लं नानुस्वारजम् ॥

भ वा लँ् लिखति १। स यँ् यं त। स वँ् वत्सरः। य लँ् लोकं ।२॥१९६॥

एषां लिपिरर्द्धबिन्दुमती। इदमेव लिखनान्तरत्वे फलम् ॥१९७॥

स्थानवृद्धिर्व्यनक्त्येतां गौणत्वेऽपि न तुच्छता ।

अस्त्यर्ककिरणक्रान्तेः काचे काचीयतापि यत् ॥

अतः – **अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ ए ऐ ओ औ। क ख ग घ, च छ ज झ, ट ठ ड ढ, त थ द ध, प फ ब भ, य र ल व, श ष स ह, अः)(क≍प** इति मुख्याः ॥ **अँ आँ इँ ईँ उँ ऊँ ऋँ ॠँ लृँ ॡँ एँ ऐँ ओँ औँ ङ ञ ण न म यँ लँ वँ** इति मुखनाशिक्याः ॥ **अं** नाशिक्यः ॥

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ। क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ त थ द ध प फ ब भ य र ल श ष स ह अं अः)(क≍प इत्येकस्थानीयाः ॥

अँ आँ इँ ईँ उँ ऊँ ऋँ ॠँ लृँ ॡँ ए ऐ ओ औ ङ ञ ण न म यं लं व इति द्विस्थानीयाः ॥ **एँ ऐँ ओँ औँ वँ** इति त्रिस्थानीयाः ॥१९८॥

अवर्णादेः स्वरस्याप्ता ह्रस्व–दीर्घ–प्लुतैस्त्रिता ।

उदात्तत्वेऽनुदात्तत्वे स्वरितत्वे स्थिता पृथक् ॥

तेषामप्युभयी मुख्य–मुखं नाशिक्यभावतः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इत्येकैकस्य संख्यातः सर्वे द्वाषष्टियुक् शतम् ॥
उच्चारापेक्षया वर्णा द्वे शते द्व्यधिके मताः ॥
समस्याकारणं –

△ अ । ▽ अ । □ अ । △ अँ । ▽ अँ । □ अँ । △ आ । ▽ आ । □ आ । △ आँ । ▽ आँ । □ आँ । △ आ ३। ▽ आ ३। □ आ ३। △ आँ ३। ▽ आँ ३। □ आँ ३। △ इ । ▽ इ । □ इ । △ इँ । ▽ इँ । □ इँ । △ ई। ▽ ई । □ ई । △ ईँ । ▽ ईँ । □ ईँ। △ ई ३। ▽ ई ३। □ ई ३। △ ईँ ३। ▽ ईँ ३। □ ईँ ३। △ उ । ▽ उ । □ उ । △ उँ । ▽ उँ । □ उँ । △ ऊ । ▽ ऊ । □ ऊ । △ ऊँ । ▽ ऊँ । □ ऊँ । △ ऊ ३। ▽ ऊ ३। □ ऊ ३। △ ऊँ ३। ▽ ऊँ ३। □ ऊँ ३। △ ऋ । ▽ ऋ । □ ऋ । △ ऋँ । ▽ ऋँ । □ ऋँ । △ ॠ । ▽ ॠ । □ ॠ । △ ॠँ । ▽ ॠँ । □ ॠँ । △ ॠ ३। ▽ ॠ ३। □ ॠ ३। △ ॠँ ३। ▽ ॠँ ३। □ ॠँ ३। △ लृ । ▽ लृ । लृ। △ लृँ । ▽ लृँ । □ लृँ । △ लॄ । ▽ लॄ । □ लॄ । △ लॄँ । ▽ लॄँ । □ लॄँ । △ लॄ ३। ▽ लॄ ३। □ लॄ ३। △ लॄँ ३। ▽ लॄँ ३। □ लॄँ ३। △ ए १। ▽ ए १। □ ए १। △ एँ १। ▽ एँ १। □ एँ १। △ ए । ▽ ए । □ ए । △ एँ । ▽ एँ । □ एँ । △ ए ३। ▽ ए ३। □ ए ३। △ एँ ३। ▽ एँ ३। □ एँ ३। △ ऐ १। ▽ ऐ १। □ ऐ १। △ ऐँ १। ▽ ऐँ १। □ ऐँ १। △ ऐ । ▽ ऐ । □ ऐ । △ ऐँ । ▽ ऐँ । □ ऐँ । △ ऐ ३। ▽ ऐ ३। □ ऐ ३। △ ऐँ ३। ▽ ऐँ ३। □ ऐँ ३। △ ओ १। ▽ ओ १। □ ओ १। △ ओँ १। ▽ ओँ १। □ ओँ १। △ ओ । ▽ ओ । □ ओ । △ ओँ । ▽ ओँ । □ ओँ । △ ओ ३। ▽ ओ ३। □ ओ ३। △ ओँ ३। ▽ ओँ ३। □ ओँ ३। △ औ १। ▽ औ १। □ औ १। △ औँ १। ▽ औँ १। □ औँ १। △ औ । ▽ औ । □ औ । △ औँ । ▽ औँ । □ औँ । △ औ ३। ▽ औ ३। □ औ ३। △ औँ ३। ▽ औँ ३। □ औँ ३।

क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ भ म य यँ र ल लँ व वँ श ष स ह अं अः)(क⌓प ॥२०२॥१९९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तद्भेदतारतम्यं तु कोटित्वेऽपि न निष्ठितम् ॥२००॥

यथेदम् –

जघन्यात् परमं यावत् क्षेत्र-कालैर्विशेषिताः ।

असंख्येया भवन्त्येते ; ।

सर्वजघन्यावगाहकाद् वर्णादेकैकप्रदेशवृद्ध्या सर्वोत्कृष्टावगाहकं वर्णं यावत् क्षेत्रापेक्षयाऽसंख्येया वर्णा भवन्ति ।१। सर्वजघन्यस्थितिकादेकैकसमयवृद्ध्या सर्वोत्कृष्टस्थितिकं यावत् कालापेक्षयाऽसंख्येया वर्णा भवन्ति ।२। २०१॥

– पर्ययांशैस्त्वनन्तकाः ।

सर्वजघन्यप्रदेशिकादेकैकपर्ययवृद्ध्या सर्वोत्कृष्टपर्ययं यावत् पर्ययापेक्षयाऽनन्ता वर्णा भवन्ति ।२। ॥२०२॥

दिवसाद् बत मासस्य यथा नैकान्तमेकता ॥

अनुदात्तादुदात्तस्य तथा नैकान्तमेकता ॥

तीव्र-मन्दादिभावैश्चेत् कर्मोदर्कविचित्रता ।

क्षमाक्रोधादिकाकर्षैः किमेषामर्थतुल्यता ? ॥

अर्थान्तरत्वे युक्तिश्चेत् सा वर्णान्तरता न किम् ? ।

देवो देहान्तरावाप्तौ सोऽयमित्येव मा ग्रहीः ॥२०३॥

अवर्णौ युगपत् प्राप्ता – विवर्णेनाऽनुरुध्यतः ।

एत्वमेव क्रमित्वे तु ऐकारत्वाय सज्जतः ॥२०४॥

नैकारादिचतुष्कस्य ह्रस्वात् केचन मन्वते ॥२०५॥

लृवर्णे दीर्घमप्येके वारयन्ति निरंकुशीः (शाः) ॥२०६॥

आकृत्या सिद्धिरिति चे- दैत औतश्च फल्गुता ।

त्र्यंशतायाः प्लुतत्वं स्या-न्न प्लुतो लिपिगोचरः ॥

स्थानसंख्या प्रमाणं चे-दाकाराद्यवमाननम् ।

अनुनाशिक-वानां च कादिभ्योऽधिकता भवेत् ॥

आदिं विना न मध्यत्वं नेदुत् प्रतिपदं पुनः ।

वंशानुपातिनी मात्रा ह्रस्वाः पञ्च तु रूढितः ॥

एकादिवर्षप्रमिताः क्रमेण कस्यापि बाला लघु-मध्य-वृद्धाः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्यस्य ते द्व्यादिशरत्प्रमाश्चेत् कश्चेतनावान् बलवद्विवादी ॥
शक्तितावत्तया बालानुग्रहे दीर्घनामनि ।
भूपतिः सिंह इतिवत् समासो लुप्तसंज्ञकः ॥२०७॥
लृतः प्रतिमा-सन्धी, भवतो यदि दीर्घतैवैति ।
पाठविभङ्गोऽपरथा वियौवनं जीवितं वा ॥

लॄ-लृकारः लृकारः ।

अपि च-सिद्धो वर्णसमाम्नायः । तत्र चतुर्दशादौ स्वराः । दश समानाः। तेषां द्वौ द्वावन्योन्यस्य सवर्णौ । पूर्वो ह्रस्वः । परो दीर्घ इत्यादि ॥२०८॥

इति परिसमाप्तं संस्कृताख्यं सरस्वतीधर्मः ॥

अतः परं प्राकृतं भविष्यति ॥

ॐ नमः पार्श्वाय ॥

ॠ -लॄ वर्ण-ङ-ञा ऐ औ तालव्य-श-शिरस्य-षौ ।
)(क ≍ पौ प्लुत-विसर्गौ च प्राकृते न चतुर्दश ॥

अ आ इ ई उ ऊ ए ओ क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व स ह अं ॥२१०॥

सर्वोदाहरणस्य —

ठाणं झाण[फ]लस्स मुत्ति-पुढवी-मेहं खमा-मुं(मं?)डिओ
जं देवं थुइ मंगलेण मणसा छत्ताइ-भूसंचियं ।
वीरं वंदइ धम्मकप्पतरुणो बीयं व मत्तू णतं (सत्तूणतं ?)
घोरन्नागमकंटकक्खयकए पाए वयं वंदिमो ॥२११॥

ए-ओ लघुतयाऽपीष्टौ ;

एवं मए पुट्ठे महाणुभावे इणमब्बवी कासवे आसुपन्ने ॥२१२॥

बिन्दुमन्ताविं-ई तथा ।

अड्ढा[इ]ज्जेहिं राइंदिएहिँ पत्तं चिलाईपुत्तेण ॥२१३॥

अव्यञ्जनेऽप्यनुस्वारः ;

स-गणहराणँ च सव्वेसिं ॥२१४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यञ्जनं त्वादि-मध्यगम् ॥

इदमपेक्ष्यैवैके —

एकाकिनोऽपि राजन्ते सत्त्वसाराः स्वरा इव ।
व्यञ्जनानीव निःसत्त्वाः परेषामनुयायिनः ॥२१५॥
स्व-स्ववर्गपरौ स्यातां , ङ- ञौ ; -

ङ्क ङ्ख ङ्ग ङ्घ । पङ्को । सङ्खो । अङ्गणं । लङ्घणं ॥ ञ्च [ञ्छ ञ्ज] ञ्झ । कञ्चुओ । लञ्छणं । अञ्जियं । सञ्झा ॥२१६॥

ऐ-औ च कुत्रचित् ॥

कैअवं । कौरवा ॥२१७॥

र-हाभ्यां ङ-ञ-यैरूना द्वित्विनः षट् च विंशतिः ॥

क्क क्ख ग्ग ग्घ च्च च्छ ज्ज ज्झ ट्ट ट्ठ ड्ड ड्ढ ण्ण त्त त्थ द्द द्ध न्न प्प प्फ ब्ब ब्भ म्म ल्ल व्व स्स ॥

विमुक्को भवदुक्खाओ निसग्गजिणवग्घतं ।
अच्चंतलच्छीविज्जाणं मज्झे वट्टसि सुट्ठिओ ॥
अगड्डुरिय सीलड्ढि-पुण्णो जुत्तत्थ सद्दवी ।
सुद्धविन्नाणसिप्पो सि पप्फुडं सुमहब्बलो ॥
निब्भरं धम्ममल्लो सि सव्वस्स हियदेसओ ॥२१८॥
शौरसेन्यां त्वमी एव यकारेणाऽधिका मताः ॥
एवकारोऽद्वित्वानामविशेषार्थः ॥

क्क क्ख ग्ग ग्घ च्च च्छ ज्ज ज्झ ट्ट ट्ठ ड्ड ड्ढ ण्ण त्त त्थ द्द द्ध न्न प्प प्फ ब्ब ब्भ म्म य्य ल्ल व्व स्स ॥

सक्कारं । मुक्खो । वग्गो । अग्घो । मुच्चदि । गच्छिदूण । पज्जलं । झुज्झदि । वट्टं । चिट्ठदि । गड्डहो । अड्ढो । कण्णो । पत्तो । तित्थं । मद्दणं । मुद्धे । संपन्ना । सप्पो । भिप्फो । दुब्बलो । गब्भो । सुकम्मं । अय्यउत्त । सल्लो । अपुव्वो । तस्स ॥२१९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्वोदाहरणस्य –

जो कज्जं न करेदि रीदि-विसढं मुच्छा-ठिदी-खेडओ
धम्मे जेण पवट्टिदा स (?) भगवदा बोही थिरप्पा फुडं ।
सच्चे जस्स जसो न झिज्झदि पहू तेलुक्ककल्लाणवी
सो सिग्घं हिदहेदुदिक्खदयिदो भावच्चिवदो भोदु मे ॥२२०॥

य-लयोः पुरतो हः स्यात् ; –

य्ह । ल्ह ॥ तुय्ह । ल्हिक्कइ ॥२२१॥

ण-म-नां स्वेऽपि साम्प्रताः ॥

ण्ट । ण्ठ । ण्ड । ण्ढ । ण्ण । ण्ह ॥

कण्टओ । उक्कण्ठा । कण्डं । सण्ढो । पुण्णो । तण्हा ॥

न्त । न्थ । न्द । न्ध । न्न । न्ह ॥

अन्तरं । पन्थो । चन्दो । बन्धवो । वन्नो । मज्झन्हो ॥

म्प । म्फ । म्ब । म्भ । म्म । म्ह ॥ व्युत्क्रमात् **म्व** ।

गुम्पइ । गुम्फो । लिम्बो । रम्भा । अम्मो । तम्वं । अम्हे ॥२२२॥

दकारस्य भवेद् रेफः ; –

द्र । चंद्र ॥२२३॥

चकारस्य मतो म् (?) ॥

च्म । रुच्मी ॥

प्राकृत-शौरसेन्योरिति वर्तते ॥२२४॥

इति परिसमाप्तं प्राकृतं सरस्वतीधर्म शौरसेनी च ॥

अतः परं **मागधिकं** भविष्यति ॥

ॐ नमः पार्श्वाय ॥

जिह्व्या तालव्य-शोर्भावा-दभावाज्ज-र-दन्त्यसाम् ।
मागध्यामवशिष्यन्ते पञ्चाग्र-दशभिर्विना ॥

अ आ इ ई उ ऊ ए ओ । क ख ग घ , च छ झ , ट ठ ड ढ ण , त थ द ध न ,प फ ब भ म , य ल व ; श , ह , अं)(क ॥२२६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्वोदाहरणस्य –

यं पत्ते मघवं फणी खु कलुणासिंगालभूदं झयं

ये शम्मत्तघडे तथा छलमढा दुट्ठा य हीलन्दि यं ।

ये शव्व)(किय लोश प)(क विमुहे यम्हा पवट्ठा नया

शे मिश्चत्त चलित्तबंधलहिदे भावत्थदे होदु मे ॥२२७॥

द्विता षड्विंशतिर्दन्त्य-स-ज्ञाप्ति-श-ट-हानितः ॥

क्क क्ख ग्ग ग्घ च्च च्छ ज्झ ञ्ञ ट्ठ ड्ड ड्ढ ण्ण त्त त्थ द्द द्ध न्न प्प प्फ ब्ब ब्भ म्म य्य ल्ल व्व स्स ॥

पक्के । तिक्खे । अग्गे । शिग्घे । शच्चे । लच्छी । बुज्झे । पुञ्ञा । लट्ठे । तुड्डदि । बुड्ढे । पण्णा । शुत्ते । शत्थे । मुद्दा । बद्धे । अन्ने । लुप्पी । पप्फोडिदे । दुब्बोही । डिब्भे । शम्मे । अवय्य । कल्लं । शव्वं । भगदत्तस्स ॥२२८॥

च-वौ तालव्यशः स्यातं(तां ?) ; -

श्च श्व । उश्चलदि । तवश्चा मे जणणी ॥२२९॥

टकारः शीर्ष्य-षः पुरः ॥

ष्ट । चिष्टदि ॥२३०॥

दन्तीयसस्य क-ख-ट ण-त-पाः फ-म-साः ॥

स्क, स्ख, स्ट, स्ण, स्त, स्प, स्फ, स्म, स्स ॥

मस्कली । पस्खलदि । पस्टे । विस्णुं । उवस्तिदे । बुहस्पदी । निस्फलं । उस्मा । देवदत्तस्स ॥

उचितशेषास्तु – **ङ्क ङ्ख ङ्ग ङ्घ ञ्च ञ्च ञ्छ ञ्झ ण्ट ण्ठ ण्ड ण्ढ द्र न्त न्थ न्ध म्प म्फ म्ब म्भ म्व म्ह य्ह ल्ह** ॥

शङ्के । शङ्खे । इत्यादि ॥२३१॥

इति परिसमाप्तं मागधीनाम सरस्वतीधर्म ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतः परं **पैशाचिकं** भविष्यति ॥२३२॥

ॐ नमः पार्श्वाय ॥

पैशाच्यां द-ण हीनत्वात् षोडशानामशं(सं ?)चरः ॥

अ आ इ ई उ ऊ ए ओ । क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व स ह अं ॥२३३॥

सर्वोदाहरणस्य –

कम्मानं घन गंठि कट्टन कलावूढो कुठारव्व जो
सज्झायस्स खने थुवंति मुनिनो पुच्छा(?) पतीपो त्ति जं ।
जो पासंडिक-भिप्फ-वात-विजयी सो बंभचेरुद्धरं
मग्गं पास [प] हू पयच्छतु सता लोगग्गचूजामनी ॥२३४॥

त्रपदे त्र-ञकारासे द्वित्व-षड्विंशतिर्भवेत् ॥

क्क क्ख ग्ग ग्घ च्च च्छ ज्ज ज्झ ञ्ञ ट्ट ट्ठ ड्ड ड्ढ त्त त्थ द्ध न्न प्प प्फ ब्ब ब्भ म्म य्य ल्ल व्व स्स ॥

पञ्ञा । पठिय्यते । इत्यादि । चंत्रं ॥

उचितशेषास्तु – **ङ्क ङ्ख ङ्ग ङ्घ ञ्च ञ्छ ञ्ज ञ्झ ण्ट ण्ठ ण्ड ण्ढ न्त न्थ न्द न्ध म्प म्फ म्ब म्भ म्व म्ह य्ह ल्ह ल्ह(?)** ॥ **पङ्के** इत्यादि ॥२३५॥

तृतीय-तुर्यान्नैवाख्यु-**श्चूलापैशाचिके** पुनः ॥

अ आ इ ई उ ऊ ए ओ । क ख च छ ट ठ त थ न प फ म य र ल व स ह अं ॥२३६॥

सर्वोदाहरणस्य –

मोहं फेटति चो कसाय कटनो तूरो कुनप्पा चयी
सक्के पूचति चस्स पुव्वपटिमं तेवाथिरा चो मुता ।
चो काठं परतुक्ख-फंचि-फकवं वानी-सुथा-निच्छरो
सामी आतिजिनेसलो तिसतु मे थम्मोतयं मंकलं ॥

परेषां प्रणिषिध्यन्ते नादियुज्योरमी अपि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गती । घम्मो । जीमूतो । झच्छरो । डमलुको । ढक्का । दामोतरो । धम्मो । बालको । भकवती ॥

नियोजितं **इत्येकेषाम्** ॥२३८॥

द्व्यात्मता गादिनवकोनत्वात् सप्तदशसु ॥

क्क क्ख च्च च्छ ञ्ञ ट्ट ड्ड त्त त्थ न्न प्प प्फ म्म य्य ल्ल व्व स्स ॥

सक्को । सुक्खं । इत्यादि ॥

उचितशेषास्तु – **ङ्क ङ्ख ञ्च ञ्छ ण्ट ण्ठ न्त न्थ म्प म्फ म्ब म्ह य्ह ल्ह । पङ्के** इत्यादि ॥२३९॥

इति परिसमाप्तं पैशाचिकं तच्चूला च सरस्वतीधर्म ॥

अतः **परमपभ्रंशो** भविष्यति ॥२४०॥

ॐ नमः पार्श्वाय ॥

अपभ्रंशे त्वृञन्यासाद् द्वादशोनितसंग्रहः ॥

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ओ । क ख ग घ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व स ह अं ॥२४१॥

सर्वोदाहरणस्य –

जं भवियण फासइ निम्मल-दंसण-सुग्घें बुञइ चरित्त सुहं
जं तृणसम जाणइ पर घर लच्छी जं देखइ नहि मूढ मुहं ।
थिर धम्म न छंडइ कटरि न वग्गइ जं सुविसुज्झइ सीलबलं
जगजीव-दिणेसर सिवपहवेसर इइ सव्वं तुह भत्तिफलं ॥२४२॥

अय्हे स्मिन् मेति वं हो नं ॥

न्व ह्न । प्राइम्व । गृह्णेप्पिणु । अय्ह इति तर्हि य्हनिषेधः ॥२४३॥

मतोध्ध्रः प्रादयस्तथा ॥

प्र, ध्ध्र इत्यादि । **प्रिय । तुद्ध्र** । इत्यादि ॥२४४॥

द्विता प्राकृतवत् ॥

क्कादयः षड्विंशतिः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक्क । सिक्खेइ । लग्गवि । सुग्घें । सच्च । उच्छंग । जज्जरि । सुज्झ । बेट्टी । दिट्ठि । वड्डा । डड्ढ । सुवण्ण । वत्तडी । एत्थु । महद्दुमु । दिद्ध । दिन्नी । घिप्पंति । निप्फलं । दुब्बल । गब्भ । छम्मुह । हेल्हि । सव्वु । सुअणस्सु ॥२४५॥

न्याय्यावशेषास्तु समेष्वपि प्राकृतवदिति वर्तते ॥ समशब्दाच्छौरसेन्यादयः ।

ङ्क ङ्ख ङ्ग ङ्घ च्म ञ्च ञ्छ ञ्ज ञ्झ ण्ट ण्ठ ण्ड ण्ढ द्र न्त न्थ न्द न्ध म्प म्फ म्ब म्भ म्ह ल्ह ॥ पङ्क, स्सु इत्यादि ॥२४६॥

व्यत्ययश्च भवेत् ॥ समेष्वपीति वर्तते ॥ प्राकृतेऽपि ॥

स्म, ह्ल । अस्माकं । गिह्लंति ॥

सिद्धिरनेकान्तादिति भगवानपि ॥२४७॥

यत्तु लौकिकं तदशुद्धवत् निरर्गलत्वाद्, अतः परं लोकाः । यथा –

कर्यो करायो भावसुं जौ जिनपूज उच्छाह ।

सम्यकवंत तुही मुगति गैलै सारथवाह ॥१॥ इत्यादि ॥

'अशुद्ध' शब्दोऽल्पशुद्ध्यर्थः ॥ मा भूदपार्थतेति ॥२४८॥

प्रकृतिः प्राकृतं चैव **शौरसेनी** च **मागधी** ।

पैशाचिकमपभ्रंशो वाचः षडनुपूर्वशः ॥

प्राकृतस्य ता(त)द्धितप्रामाण्यात् प्रकृतिः संस्कृतमित्यर्थः ॥

परिसमाप्ता वाक् षडङ्गी हंसलिविश्च ॥२४९॥

— x —

इदानीं विद्या ॥

अ इ उ ऋ लृ च ए ऐ ओ औ त तः परम् ।

ह यं व र ल वच्चैव ङ क खं घ ग वत्ततः ॥

ञ च छ झं जसम्पृक्तं ण ट ठं ढ ड संयुतम् ।

न त थं ध द संयुक्तं म प फं भ ब वत् पुनः ॥

श ष श इति नव ते वर्गा **भूतलिपौ** मताः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अ इ उ ऋ लृ ए ऐ ओ औ। ङ य व र ल। ङ क ख घ ग, ञ च छ झ ज, ण ट ठ ढ ड, न त थ ध द, म प फ भ ब, श ष स ॥२५०॥

एकैकवर्णोद्धारेण वियद् वाताग्निवार्भुवः ॥

अ ए ह ङ ञ ण न म श — व्योम १।

इ ऐ य क च ट त प ष — वायुः २।

उ ओ व ख छ ठ थ फ श — अग्निः ३।

ऋ औ र घ झ ढ ध भ — जलम् ४।

लृ ल ग ज ड द ब — पृथिवी ५।

भौतीयम् ॥२५१॥

ऐँ नमः ॥

अकार मौलिर्मिलिताऽसि मञ्जुलं, त्वमेव मातर्विपुलामलश्रिया ॥२५२॥
त्वदास्यमातंस्तुमहेतरां भृश-प्रसन्नशोचिः श्रुतदेवते ! वयम् ॥२५३॥
इवर्णनेत्रा जगतीर्विलोकसे (२५४), उवर्णकर्णे शृणु सेवकोऽस्म्यहम्। (२५५)
ऋवर्ण-घोणाऽसियशःसुमार्चना (२५६), लृवर्णगंङां (ण्डां ?) भवती जिनो गतः ॥(२५७)

मदीयमेदैद्दश नालियामला दुरूहमागः कुरु चारुचर्बणा।

सपरिमिव एओ नयाविनाशात् ऊर्द्ध्वमधश्च (?) ॥२५८॥

पटिष्ठमोदौद्विदितौष्टिचेष्टतां भवत्यरित्रासकरी वरीयसी। ॥२५९॥

ब्रवीष्यनुस्वाररसज्ञया प्रियं वचः(२६०) वहन्त्यब(म्ब) विसर्गकन्धराम।

वर्त्तस इत्यध्याहारः ॥२६१॥

तमोऽम्बु तर्त्तुं भजसे भुजौकुभू(ञू) ; -

क ख ग घ ङं, च छ ज झ ञ मिति ॥२६२॥

शिवाध्वगायाश्चरणौ टु-तू तव।

ट ठ ड ढ णं, त थ द ध न मिति ॥२६३॥

पण प्रसूतिः प-फ कुक्षिरीक्ष्यसे ;

सर्वत्रोभयं दक्षिण-वामतः ॥२६४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न वज्रजेयाऽसि वरीढका (२६५) इहयां (?),
भ-वनाभिमाहुर्मुनिलक्ष्यलक्षणा(ण)म् ॥२६६॥
अनीदृशं मो रसमिद्धमेधसः ।
यामिति गम्यम् ॥२६७॥
न तत्र चित्रं यदि यादि धातुमत् त्वदङ्गमुच्चावचविश्वबीजवत् ।
य र ल व श ष सा रा(र) साऽसृग्मांस-मेदो-ऽस्थि-मज्ज(ज्जा)-शुक्राणि ॥२६८॥
हकार सुश्वासिनि धर्मधीमतां भवत्प्रसादाद् भृशमायुरेधताम् ॥२६९॥
नमो भवत्यै भुवि जीवतालमे(?)ऽनवद्यविद्या मम देव्युदीयताम् ॥२७०॥
क्ष इत्यकर्माणमुपैषि पर्ययं क्रियाद् द्रुतं दारुणदुर्गतिक्षयम् ॥
अतः – **अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ, अं अः । क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह लं क्षः** ॥२७१॥

अर्हन्तोऽजा अथाचार्या उपाध्याया मुनीश्वराः ।
मिलित्वा यत्र राजन्ते तदोंकार पदं मुदे ॥
अ अ आ उ म् ॥२७२॥
बीज-मूल-शिखा कात्स्न्र्य-मेकक-त्रि-त्रि-पञ्चभिः ।
अक्षरैरोंनमः सिद्धं जपानन्तफलैः क्रमात् ॥
ॐ १। **ॐ नमः** २ **सिद्धं । ॐ** इत्यनुवर्तते ॥
नन्ता हन्त भवत्येको भवत्येकश्च शंसिता ।
शंसिता लभते कामान् नन्ता लभति वा न वा ॥३॥
ॐ नमः सिद्धम् ॥२७३॥
हूमर्हद्धरणाचार्यो-पाध्यायमुनिगोचरम् ।
ह् र् उ उ म् ॥२७४॥
सूर्युपाध्यायमुनयः स्पृशन्त्यूंकारमादरात् ॥
उ उम् ॥२७५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आं जिनाऽजनुराचार्य-मुनितः प्रादुरस्तीह(स्ति ह) ॥

अ अ आ म् ॥२७६॥

अर्हद्धरणवाग्देव्यो ह्रींकारस्य निबन्धनम् ॥

ह् र् ई ॥२७७॥

आद्युपान्त्यान्तिमार्हन्तो गीश्चाऽर्हं पदमास्थिताः ।

ज्ञान-दर्शन-चारित्र-मुक्तयो भान्ति तत्र वा ॥

अ र् ह् अं ॥२७८॥

श्रींकारे श्रुत-धरणौ पद्मावत्यृषयः परम् ॥

श् र् ई म् ॥२७९॥

ह्रोमर्हद्धरणादेह-वाचकर्षिजमीरितम् ॥

ह् र् अ उ म् ॥२८०॥

अर्हन्त धरणादेहै-स्तपसा ह्रः समाश्रितम्(तः १) ॥

ह् र् अ स् ॥२८१॥

हंसो जिनाऽजनुर्योगी श्रद्धा-श्रुत-तपांसि चेत् ॥

ह् अ म् स् अ स् ॥

अत्यल्पमेतत् । याक्षीयम् ॥२८२॥

— x —

स्वरा अ इ उ ए ओ स्यु-रोष्ठ्य-बं तालवीय-शम् ।

मुक्त्वा व्यञ्जनजातिः स्या-दित्येवोडुलिपेर्गणः ॥

अ इ उ ए ओ । क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ – भ म, य र ल व ष स ह । इत्यतः - अ व क ह ड, म ट प र त, न य भ ज ष, ग स द च ल । घ ङ छ, ष ण ठ, ध फ ढ, ञ झ थ । अ इ उ ए कृत्तिका, ओ व वि वु रोहिणी, इत्यादि ॥ **नाक्षत्रीयम्** ॥२८३॥

आदयः कादयो ज्ञेयाः ख-गौ घ-ङौ परस्परम् ।

वर्गान्तरेणाऽन्ये वर्णा **मूलदेवस्य** भाषिते ॥

क का कि की कु कू के कै को कौ कं कः । अ ग ख ङ घ ट ठ ड

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढ ण, च छ ज झ ञ, प फ ब भ म, त थ द ध न, श ष स ह, य र ल व ॥

मूलदेवीयम् ॥२८४॥

हंसी भौती च याक्षी च , नाक्षत्री मूलदेव्यपि ।

राक्षसी द्रविडी नाटी , मालवी लाटि-नागरी ॥

तौरष्की पारसीकी च यावनी कीरि-सैन्धवी ।

अनिमित्ताऽपि चाणाकी लिपयोऽष्टादशाऽप्यमूः ॥

ब्राह्मै दत्ता भगवता, तन्नाम्ना विश्रुताऽस्तु ॥

आदिदेवेन ब्राह्मीसंज्ञितायै पुत्र्यायिति ॥ "**नमो बंभीए लिवीए**" इति प्रवचनं च ॥

सर्वं सुकरमभ्यस्त-सम्प्रदायादयो यदि ।

आहोपुरुषिकाहेतो-र्मा वक्र-जडताऽस्तु नः ॥

इति तु शब्दार्थः ॥२८५॥

इति परिसमाप्तो यथावाप्तो लिपिनिर्देशः ॥

— x —

अतः परं **मीमांसा** भविष्यति ॥२८६॥

ॐ नमः पार्श्वाय ॥

शिष्यानुमोदिनी तासा-मियं पर्यायतोऽजनिः(नि) ।

वस्तुतोऽनादयः सर्वाः स्थावर-त्रसवद् गिरः ॥

नाऽऽसीत् , न भविष्यति वा समयो यत्र नाऽभूवंस्त्रसा न भविष्यति (न्ति) स्थावरा वेति ॥२८७॥

नित्यताऽनित्यताऽस्तित्व-नास्तित्वादिविशेषणैः ।

अनन्तैर्भारतीर्विद्या-स्तटिनीरिव भङ्गिनीः ॥

नहि विशेष्यस्य विशेषणानि संख्येयान्यसंख्येयानि वेति वक्तुं पार्यते ॥२८८॥

इवर्णस्य कथं यत्वं नित्यतैकान्तमस्तु चेत् ।

अनित्यतैव चेदास्ते स एवार्थगमः कथम् ? ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दद्ध्यानय । दधि आनयेत्यर्थः ॥

मीमांसक – सौगतान्मोहः ॥२८९॥

व्यतिरेकाद् भवापायौ घटस्यान्वयतः स्थितिः ।

यदि किं न तदाऽश्लेषि घटयोरपि तत्त्रयम् ॥

वाच्यानुबद्धं हि वाचकम् । यत्किंचित् त्रित्ववच्च । अन्यथा खरविषाणादिवदवस्तुत्वमिति ॥२९०॥

रविराव्रियते कस्मा-ल्लोहकारत्वधीः कुतः ।

कस्माच्च कर्मबन्धः स्याद् वद विश्वत्रयेश्वर ! ॥

'घनयोगाद्' इति प्रत्युत्तरी(रि)तम् ॥

घन इति श्रुते मेघत्वाभ्युदयश्चेदयोघनादित्वविगमो घनत्वावस्थितिरित्यादि ॥२९१॥

आदिमध्यावसानस्थः पकारः स्वीयपर्ययैः ।

पवनं वपनं चैव वनपं व्यञ्जयत्यसौ ।

पवने यथा-पकारस्यातस्त्वाद् वपनस्योद्गमः । पवनस्य विपर्ययः साधारणवर्णसमूहस्याऽवस्थानमित्यादि ॥२९२॥

द्रव्यतः क्षेत्रतः कालाद् भावतः स्वपराश्रयात् ।

मिथोऽमी प्रतिपद्यन्ते हेतुमद्धेतुरूपताम् ।

नहि कश्चिद्धेतुरेव हेतुमानेवेत्यादितया सुवचः ॥२९३॥

आग्ग(अगा)दावबलादौ चा-नुत्तरादौ प्रवर्तते ।

अभावो देशभावश्च सर्वभावो नकारतः ॥

न गच्छतीत्यगः । अल्पं बलं यस्याः साऽबला । नास्त्युत्तरमस्मात्परमित्यनुत्तरं सर्वोत्तरमनुत्तममिति यावत् ॥२९४॥

कुमारशब्दः प्राच्याना-माश्विनं मासमूचिवान् ।

कीर्त्यते द(दा)क्षिण(णा)त्यानां चौरस्त्वोदनवाचकः ॥

न चैतन्निन्द्यम् , "वर्त्तका शकुनौ प्राचा-मुदीचां हन्त वर्त्तिका" इत्यादिप्रामाण्यात् ॥२९५॥

'षड्गुरु' रिति शब्दः शत-मशीतिमाख्यत् पुरोपवासानाम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपवासत्रयमेव तु संप्रति आ(त्या)ज्ञाप [य] त्येषः ॥
दुःषमायां संयमस्य दुःपाल्यत्वादिति ॥२९६॥
घृतवाची भिषक्तन्त्रे बोधितो 'मिथुन' ध्वनिः ॥२९७॥
श्रूयन्ते च परावर्त्ताः समस्यायामनेकधा ॥
रुचिवैचित्र्यादनुभूयते ककारादौ खकारादीनामन्यतमत्वं तैस्तैरिति ॥२९८॥
सर्वासंख्यसमुद्राणां यावन्तो जलबिन्दवः ।
तदनन्तगुणार्थं स्या-न्नूनमेकैकमक्षरम् ॥
वस्तूनामानन्त्या माने(दे)वम् ॥२९९॥
स्यात्पदस्यैकदेशेऽपि समुदायोपकारिता ।
नैकान्तभिन्नादेशा हि वपुषांश्च(चू)लिकेव यत् ॥
केली-कुशल-कल्याण-कलादिः कादिमान् गणः ।
विश्ववर्ती समस्तोऽपि समस्यस्त्वेकशेषतः ॥
ततः सांकेतितत्वं स्याद् विभक्तिविनिवारकम् ।
इत्यर्थानयनोद्योगः सर्वत्रापि विधीयताम् ॥
अनेकान्तितादूतति(दूती)संकेतः ॥३००॥
चत्वारोऽक्षरनिक्षेपाः प्रोदिताः पूर्वपाठिभिः ।
नामतः स्थापनातश्च द्रव्यतो भावतस्तथा ॥
एतैः सर्वस्यापि व्याप्तत्वात् ॥३०१॥
द्रव्यार्थतस्त्रयो बोध्या-स्तुरीयः पर्ययार्थतः ॥३०२॥
द्रव्ये पर्ययगौणत्वं पर्यये द्रव्यगौणता ॥३०३॥
विगौणं नैव मुख्यं स्या-न्न गौणं मुख्यवर्जितम् ।
उपचारानुगत्यैव गौणान्मुख्येऽतिरिक्तता ॥३०४॥
अकारोऽयमिकारादेः सर्वथैवाऽऽदिमान् यदि ।
स जातो जायमानो वाऽगातां नामनि नाऽथवा ॥
इष्टः प्रथमपक्षश्चेत् सामान्याद्वा विशेषतः ।
नैकवर्त्ति तु सामान्यं विशेषे वैरमन्यतः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वितीयो यदि वाच्यत्व-हानेर्गगनपुष्पंता ।
तस्मादक्षर इत्याख्या नामाक्षरतयाऽऽदितः ॥३०५॥
असद्भूतं च सद्भूत-मिति तु स्थापनाक्षरम् ॥३०६॥
यत्तदाकारवत् पूर्वं ;
अतः समस्या न वित्राणा ॥३०७॥
द्वितीयं लिपयः समाः ॥३०८॥
मानसं वाचिकं चेति द्रव्याक्षरमपि द्विधा ॥३०९॥
चिन्तिते मानसत्वं स्यात् ; ॥३१०॥
वाचिकत्वं तु भाषिते ॥३११॥
भावाक्षरं द्विधा देश-सर्वावरणहानितः ॥३१२॥
द्रव्याक्षरजमाद्यं स्यात् ;
पराधारेणाऽऽत्मनिष्ठम् ॥३१३॥
परं तु प्रतिबिम्बवत् ॥
केवलज्ञानिनि परिणतम् ॥३१४॥
साक्षरत्वं निगोदानां जीवत्वादुपयोगतः ।
यदेषु भावचेतो हि नातीव प्रतिषिध्यते ॥३१५॥
सनिगोदीयजीवस्य जिनविज्ञातमर्मणः ।
अक्षरानन्तभागस्तु सर्वदैवाऽवतिष्ठति(ते) ॥
मूल्यत्वेऽनन्तजीवौघ-मूलकस्य कपर्दिका ।
तदेकजीवस्तन्मूल्या-ऽनन्तभागं यथाऽर्हति ॥३१६॥
सन्तोऽक्षरतया प्रायः खुंकाराद्यप्यनक्षरम् ।
संक्षिपन्त्यर्थयुक्तत्वाद् ज्ञानाज्ञानसमासवत् ॥३१७॥
ज्ञानं केवलिनो ब्रूयाः सविकल्पमुताऽन्यथा ।
आदित्वेऽवतरन्त्येता भवामि-प्रमुखाः क्रियाः ॥
अन्यत्वे दर्शनत्वं स्यात् कपिलश्चातिपूजितः ।
प्रमाणहानेरापत्ति-स्ततः शशविषाणता ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्त्वस्मरणसानन्दै - गुरूपास्तिप्रसादतः ।
निरक्षरत्ववादाय देयो हन्त जलाञ्जलिः ॥३१८॥
निगोदाद्यजपर्यन्त - जन्तुभ्यो जगतोऽपि वा ।
न पनीपत्यते यस्मात् तस्मादक्षरमैक्षरम् ॥
न पनीपत्यते - नाऽत्यन्तं पततीत्यर्थः ॥
अत एव कथंचिद् भेदः कथंचिदभेद इति सार्वत्रिकम् ॥३१९॥
यदृच्छा-वर्णसंयोग-कात्स्न्यामृतमहोदधिः ।
नैगमादिनयोर्म्यात्मा चिरं जीया**ज्जिनागमः** ॥

स्वरादयोऽकारादयश्चोभये वर्णा इति **नैगमः** ।१॥
स्वरादय एवेति **संग्रहः** ।२॥
अकारादय एवेति **व्यवहारः** ।३॥
तात्कालिका एवेति **ऋजुसूत्रः** ।४॥
वर्णः अक्षरमित्येवं ध्वनय एवेति **शब्दः** ।५॥
भिन्नो वर्णो भिन्नमक्षरमिति **समभिरूढः** ।६॥
वर्ण्यमान एव वर्ण इत्येव**मेवंभूतः** ।७॥
अस्यातोऽमी अन्तर्गडवः ॥३२०॥

इति शुश्रूषिता किञ्चिद् यथावद्वर्णमातृका ।
हेयोपादेयविज्ञेय-रहस्याभ्याससिद्धये ॥

अन्यत्र केवलि-पूर्विभ्यः प्राग्भारस्य दुस्तरत्वात् । नयानपद्रोहो यथावत्त्वम् ।१॥

अथवा साध्विदमुच्यते —

तीर्थे ज्ञातसुतस्य सर्वजनतानन्दैकहेतोरियं
या शाखाऽप्रथि **पार्श्वचन्द्र**जनिता तत्राऽभवन् **पाठकाः** ।
ये **रामेन्दु**पदा जिनेन्द्रपदवीपाथेयभाजोगत -
च्छिष्यस्याऽ**क्षयचन्द्रवाचक**मणेः पादप्रसादोऽवतात् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यदेवं —

ॐ नमः श्री मच्चरमपरमेश्वरतीर्थसमर्थितपरमार्थपणकोटिमत्**कौटिकगणा**-ऽतन्द्र**चान्द्रकुल**विपुल**बृहत्तपो**बिरुदपूरितपरभाग**नागपुरीया**वदातविदित मुत्पीव**पार्श्वचन्द्रशाखा**सुखाकृत-सुकृतिवर**रामेन्दूपाध्याय**पदारविन्द मकरन्दमधुकरवाचकपदवीपवित्रि**ताक्षयचन्द्र**चरणेभ्यः ॥३२२॥

किं च —

संसारार्णवमग्नमादृशजनप्रोद्धाररज्जूपमाः

प्रेष्ठाचारविचारविश्रुत**यशश्चन्द्रो**दयस्फूर्तयः ।

ये ते विभ्रमभीतिभञ्जनभुजावीर्यप्रवीरा वरं

देयासु**र्गणिरक्त(त्न ?)चन्द्र**गुरवः कारुण्यलीलायितैः ॥

जगद्देशादेरपि कथंचिज्जगत्त्वम्। अन्यथा तीर्थकरादीनामापि जगदीश्वरत्वा-नुपपत्तेः ॥३२३॥

नन्दन्तु निर्वैरस्वभावा महामुनयः । तथाविधानां नामनिर्देशस्याऽप्युत्त-मत्वात् । इदमपेक्ष्यैवेदम् —

कृपापीयूषापात्राणां निश्शेषसुखशाखिनाम् ।

विद्याचरणचारूणां दासोऽस्मि महतामहम् ॥३२४॥

परिसमाप्तं मातृकाप्रकरणं तदिति ॥श्री॥

आसीदत्र महामुनिश्च **विजयानन्दाख्यसूरीश्वरः**

श्रीलक्ष्मीविजयाह्वयश्च सुगुणस्तस्याऽजनि शिष्यकः ।

तच्छिष्यस्य मुनीश**हंसविजय**स्यात्रोपदेशेन च

ग्रन्थोऽयं लिखितो बभूव भविनां मोक्षाख्यशर्मौघदः ॥१॥

लिषीतं कला गोपीनाथः ॥ श्रीरीनाथ मुकाम नागोर ॥ समत १९६६ रा मीती फागुण बद १४ लिखी छै। मुकाम भडोदामध्ये। मुनी माराज संपतविजेजी ग्रंथा ग्रंथ ५५० ॥

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानधर्मकृत
दामन्नककुलपुत्रक रास

– कल्पना के. शेठ

प्रास्ताविक :

प्राचीन समयथी मानवने कथा के वार्तामां रस रह्यो छे. आना परिणामरूपे विश्वमां भिन्न भिन्न देश, भाषा, समाज अने संस्कृतिना आरंभना समयथी ज कथा के वार्ता लखाती आवी छे. भारतमां छेक ऋग्वेदथी शरू करीने ब्राह्मण, आरण्यक अने उपनिषद्काल सुधी आवुं साहित्य लखायेलुं मळी आवे छे. संस्कृत–प्राकृत साहित्यमां तो 'बृहत्कथा', 'वसुदेवहिंडी', 'बृहत्कथाश्लोकसंग्रह', 'कथासत् सागर', बृहत्कथामंजरी', 'वैतालपंचविशति', 'पंचतंत्र', 'हितोपदेश' इत्यादि अनेक कथासंग्रहो मळी आवे छे.

प्राचीन अने मध्यकालीन गुजराती साहित्य पण आ वारसो साचवे छे. एना फळस्वरूपे इ.स.नी बारमी सदीथी आरंभीने आज सुधी आवी अनेक कथाओ जैन अने जैनेतर कविओ वडे लखाइ छे. अत्रे आवा कथा साहित्यनी एक लघु कृति **'ज्ञानधर्मकृत–दामन्नककुलपुत्रकरास'** संपादित करीने आपवामां आवे छे.

रास साहित्य ए समग्र प्राचीन गुजराती साहित्यनो एक प्रकार छे. प्राचीन मध्यकालीन गुजराती साहित्यनो घणो मोटो भाग 'रास' नामे ओळखाती रचनाए रोकेलो छे. रास प्रकार ए अपभ्रंशभाषानो गुजराती भाषाने मळेलो वारसो छे. सामान्य रीते रास साहित्य १२मा सैकाथी १८मा सैका सुधीना गाळामां विशेषपणे मळी आवे छे. प्राचीन मध्यकालीन गुजरातीमांथी मळी आवतुं रास साहित्य अत्यंत विशाळ छे, अने भाषा विकासनी दृष्टिए, इतिहासनी दृष्टिए तेमज साहित्य स्वरूपनी दृष्टिए तेनुं घणुं ज महत्व छे. रासनां एकथी वधु प्रकारो हतां. रास गेय हता अने नृत्यमां पण तेनो उपयोग थतो हतो.

आवा अनेक रासोमांना महद् अंशे रासो हजी अप्रगट अने हस्तप्रत स्वरूपे ग्रंथभंडारोमां सचवायेलां मळी आवे छे. अत्रे एवा एक अद्ययावत् अप्रकाशित ज्ञानधर्मकृत 'दामन्नककुलपुत्रक रास'ने संपादित करी प्रस्तुत कर्यो छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतवर्णन अने संपादन पद्धति

उपर जणावेल कृतिनुं संपादन लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर, अमदावादना मुनि पुण्यविजयना हस्तप्रत भंडारमांथी प्राप्त एक मात्र प्रत परथी करेल छे.

आ प्रतनो क्रमांक ३८०९ छे. प्रतमां कुल्ले चार पत्र छे. पत्रनुं कद २६.० x ११.५ से.मी छे. पत्रनी बन्ने बाजु २.५ से.मी. नो हांसियो छे. प्रत्येक पाना पर १७ पंक्ति छे. कुल्ले १३६ कडीओ छे. पातळा कागळनी आ प्रत देवनागरी लिपिमां काळी शाहीथी ग्रंथकारे पोते लखेली – स्वहस्ताक्षर प्रति छे. पाठ सुधारेलां छे. पत्रनो क्रमांक जमणी बाजुए हांसिया मां दर्शाव्यो छे.

आरंभमां भले मींडु कर्या पछी कृतिनो प्रारंभ करेलो छे. अने अंतमां 'इति दामन्नककुलपुत्रकसंबंधोयं' एम लखेलुं छे. प्रतनो लेखन सवंत् मळ्यो नथी. पण रचना संवत 'सत्तरइ सइ पइत्रीस समइ' अर्थात् १७३५ मळे छे अने स्वहस्ताक्षर प्रत होवाथी तेज समय लेखननो होवानुं अनुमान करी शकाय.

एक मात्र मळेल प्रत परथी प्रस्तुत कृतिनुं संपादन कर्युं छे तेथी प्रतनो पाठ ग्रंथपाठ तरीके लीधो छे. क्वचित् लेखनमां थयेल दोष सुधार्यो छे.

काव्यना कर्ता : ज्ञानधर्म

काव्यना कर्ता के कविनाम के गुरुपरंपरा विषे काव्यना अंतिम भागमां

श्रीखरतरगच्छ दिनकरु ए , युगवर **श्रीजिनचंद्र** वि०
रीहड वंसई परगडउ ए , जिणै प्रतबोध्या **नेरंद्र**
१२८ वि०

तासु सीस **मतिसर** गुरु ए , पुण्य प्रधान उवझाय वि०
तासु सीस **सुमतिसागर** भला ए , पाठक पंडितराय
१२९ वि०

साधुरंग वाचकवरु ए , सकल शास्त्र प्रवीण वि०
तासु सीस जगि जाणीय ए , पाठक **श्रीराजसार**
१३० वि०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तासु सीस ईण परि भणई , **ज्ञानधंरम** हितकार वि०
सत्तरई सई पईत्रीस समइ , विजयदशमि रविवार
१३१ वि०
शांतिनाथ सुप्रसादथीए , रचीयउ ए अधिकार वि०
राजई **धर्मसुरिंद** नइए , रचीया **खंभात** मझार
१३२ वि०

मळता उल्लेख परथी कृतिना कवि खरतरगच्छना युगवर श्रीजिनचंद्रनी परंपराना पाठक राजसारना शिष्य ज्ञानधर्म छे. कृतिमां प्राप्त उल्लेख परथी आ काव्य रचना सवंत १७३५(इ.स. १६७९)मां खंभातमां थइ छे एम कही शकाय. आ कृति सिवाय ज्ञानधर्मे अन्य कोइ कृति रची होवाना उल्लेख मळ्या नथी.[१]

काव्यनो बंध

एकसो छत्रीस (१३६) कडीना आ काव्यनो पद्यबंध मुख्यत्वे दुहा-चोपाई अने देशीओनो छे. कविनुं शब्द प्रभुत्व मध्यम कोटिनुं छे. प्रास प्रमाणमां ठीक सारा मळे छे.

१. जैन गूर्जर कविओ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजसारशिष्यज्ञानधर्मकृत
दामन्नककुलपुत्रकरास

स्वस्ति श्री मंगलकरण , प्रणमी पास जिणंद
श्रुतदेवी सद्‌गुरु नमुं , टालई भव-दुख-फंद. ॥१

श्रीजिनवर ईम उपदेशई , मनवंछित दातार,
धरमामाहि प्रधान छई , विरतिधरम श्रीकार. ॥२

तिणि उपरि दृष्टांत , ए सुणज्यो चतुरसुजाण ,
कुलपुत्रक दामन्नकई , जिम कीधउ पचक्खाण. ॥३

तासुं कथा हु वर्णवुं , सांभलिज्यो सहु कोय ,
पाप-तिमर दूरइ हरइ , दिनकर-कर जिम सोय. ॥४

ढाल-१ चउपइनी

जंबुद्वीप एहिज विख्यात , दक्षिण दिशा तिहां भरत कहात,
गजपुर नामई नगर उदार , ऋद्धि तणउ जिहां को नही पार. ॥५

सुनंद तिहां कुलपुत्रक एक , वसइ विचक्षण अति सुविवेक
भद्रक नइ सुविनित प्रवीण , सकल गुणे संपन्न न हीण. ॥६

जिनदासक श्रावक छई तसुमित्र , धर्म-बुद्धि करि गात्र पवित्र ,
जिनधर्मी गुरुभक्त दयाल , त्यागी भोगी नइ चउसाल. ॥७

ते बेहुनइ अधिक सनेह , चित्त एक जूजइ देह ,
दंभरहित ते पालइ प्रीति , उत्तम-कुलनी एहि ज रीत. ॥८

इण अवसरि उद्यान मझार , समवसर्या गिरूआ गणधार ,
धर्मधोष नामई गुणवंत , ज्ञान क्रिया सोभित उपशांत. ॥९

दशविध साधु धरम जे धरई , सर्व जीवनी रक्षा करई ,
क्रोधादिक कीधा सहु दुर , सतरभेद संयम भरपुर. ॥१०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनशुद्ध भावना भावई बार , छंडई पातक भेद अढार ,
तप जप करि साधई शिव-पंथ , निरमम निरहंकार निग्रंथ. ॥११

मधुकरनी परि ल्यई आहार , दोष लिगावइ नहीय लिगार ,
साधुधरम सुधा प्रतिपाल , जिण वांद्या जायइ जंजाल. ॥१२

एहवा देखी नयणे साध , ते पाम्या बे हरख अगाध ,
चालउ ए मुनीवर वंदीयइ , सुधउ समकित लहीस्युं हीयइ. ॥१३

दूहा

देखीनइ आव्या तिहां देइ प्रदक्षिण तीन ,
चरण-कमल प्रणमी करी , ध्यान धरइ लयलीन. ॥१४

उचित ठाम जोइ करी , बइठा सनमुख आवि ,
धरम-मारग काइ उपदिशउ , गुरजी इण प्रस्तावि. ॥१५

ढाल-२

(आप सवारथ जग सहरे , एहनी)

उपदेश भाखइ साधुजी , करउ मांसनउ परिहार ,
जीवां तणउ ए पिंड छइ , ए भाख्यउ रे भगवंत विचार. ॥१६

सांभलउ भवियण हित भणी रे , ए तउ विरूपउरे रसनउ अभिलाख
ए सेव्यइ जीव दुख लहइ रे , एम बोलइरे गुरु सूत्रनी शाख. ॥१७

ढाल-३

(सांभलउ भवियण हित भणी रे . . . . ए आंकणी)

ठाणांगसूत्र मांहे कह्या , गति नरगना हेतु च्यार
जिहां अशुभ आउखउ लहइ , वेदन रे जीव विविध प्रकार.
॥१८.सां.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अति घणा आरंभ जे करइ ,
परमांस-भक्षण वलि करइ ,
मूर्छित परिग्रहमांहि
वध त्रस जीव हो इंद्री पांचाहि.
॥१९.सां

संवेगरस मनमां वस्यउ ,
अभिग्रह लीधउ एहवो ,
गुरुवचन सांभलि चित्त ,
न करुं वध हो पर आप निमित्त.
॥२०.सां

तिण समई तिहां किण प्रगटीयो ,
हाहाकार हियउ तिहां ,
कल्पांत सम दुक्काल ,
माल मुलक तिहां खाधा ततकाल.
॥२१.सां

छठा अरउ सरिखउ थयउ ,
प्रेम-भाव सहु माठा पड्या ,
जन करई मांसनउ भक्ष ,
जाणे माणस हो राक्षस परतक्ष.
॥२२.सां

एहवइ घरणी इम भणइ ,
खंजनी परि बईसी रह्यो ,
निज कुटुंब मेटी भूत ,
पालिस किम हो घरना पूत.
॥२३.सां

उद्यम विना किम चालिस्य ई ,
सरवर तटइ जइ माछला ,
आजीविका सुणि कंत ,
लेइ आवउ हो खावां निश्चित.
॥२४.सां

एहवा वयण सुणी करी ,
परजीव आतम सम अछई ,
बोल्यउ तिहां ततकाल ,
तिण न करुं हो हिंसा विकराल.
॥२५.सां

प्रियु तणा वचन सुणी करी ,
वंच्यउ तुमइ रे वरतीये ,
बोली प्रियां तब वयण ,
धूतारा रे ते नहीं तुझ सयण.
॥२६.सां

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ए कुटुंब दीन दयामणउ , देखी कृपा नहीं कांइ ,
भोजन विना किम प्राणनी , धरवानी हो सद्दहणा थाइ.
॥२७.सां.

अहम प्राण छुटइ वल्लहा , किम लाज रहिस्यइ तुझ ,
मुहडउ दिखाडिस लोकमां , किम करिनइ हों ते कहि तु मुझ.
॥२८.सां.

भरतार कथन करई नही , आग्रह कीयो प्रिया जोर ,
शाला कहइ तटकी तबई , माणस छई हो तुं अथवा ढोर.
॥२९.सां.

ते स्वजन नउ प्रेर्यउ थकउ , दह गयउ जलनइ तीर ,
मीन ग्रहण ऊंडई जल तिहां जान नाखइ हो धीवर जिम वीर.
॥३०.सां.

नदीयां मिलइ जीम एकठी , भर समुद्र सिंधु मझार ,
तिम जालमांहि आवी पडई , तडफडता हो मच्छ लाख हजार.
॥३१.सां.

मनमांहि अनुकंपा वसई , परतक्ष देखी पाप
विण भोगव्या छुटई नहीं , जीम पामइ हो भव भाव संताप.
॥३२.सां.

ततकाल जलमांहि नांखीया , दुक्खीया देखी मछ ,
निज कुटुंब सुखनइ कारणइ , ए कारिज हो किम किजइ तुच्छ.
॥३३.सां.

दूहा

पाछउ फिरि आयवउ घरे , तिणि दिन संध्याकाल ,
बीजइ दिन प्रेर्यउ थकउ , चाल्यउ लेइ जाल. ॥३४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुकंपा वसि ऊभउ द्रहनई कुल
स्वजन कुटुंब अनेक कहउ पीण हिंसा दुख मूल. ॥३५

वाधइ व्याधि कुपथ्यनी दुख पामइ जिम जीव
तिम हिंसा करी आतमा परभवि पाडइ रीव. ॥३६

इम चींतवि आव्यउ फरी त्रीजइ दिनि गयउ जाम
जात पड्या मच्छ काढतां मुडी पाख इक ताम. ॥३७

आव्यउ घरे ऊतावलउ तिहां तोडी मच्छ-जाल ,
कुण देखइ दुख नरकना परिजन काजइ आल. ॥३८

सीख करी सहु कुटुंबसु अणसण कीधउ सुनंद
आऊखउ पूरी कीयो पालो धरम अमंद. ॥३९

ढाल-४

(चूडलइ जोवन जिलि रहीयो , एहनी)

तिहांथी चविनइ ऊपनो देश मगध सुखकार ,
राजगृह नामइ भलो पत्तन भरत मझार. ॥४०

ए फल देखउ धरमनउ पाम्यउ छइ परलोक ,
धरम थकी सुख संपनउ हरि गयउ दुख सोक. ॥४१

ए फल देख उ धरम नउ , ए आंकणी.

राजा राज करइ तिहां नामइ श्रीनरवर्म्म
तेजइ करि दिनकर समउ भाजि गयउ असि भर्म्म. ॥४२.ए०

वसइ तिहां व्यवहारीया धनवंत सगला लोक
इहक आवइ याचिवा आपइ सगला थोक. ॥४३.ए०

एक तिहां व्यवहारीयउ नाम अछई मणिकार ,
मणि माणिक सोना तणउ नहि को तेहनई पार. ॥४४.ए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घरि घरिणी छइ तेहनइ
सुयशा नाम अनुप
विस्तरीयउ यश जेहनउ
परिमल कुशम सरुप. ॥४५.ए०

आवी तसु कुक्षि उपनउ ,
उत्तम जीव सुनंद
संपूरण दिवसे थए
जनम्यउ पूनिम-चंद. ॥४६.ए०

कुटुंब सहु मेली करी ,
दामन्नक नाम दीध
माबापना मन हरखीयां
मंगल कारिज कीथ. ॥४७.ए०

चंदकला जिम दिन प्रतइ
अनुक्रमि वाधउ बाल ,
पिता मनोरथ पूरतउ
लोचन भाल विशाल. ॥४८.ए०

हुयउ वस्तर आठनउ
थयउ कलान उधार
प्रगटी तेहवइ तेहनइ
घरे भयंकर मारि. ॥४९.ए०

खबर थइ दरबारमां
राजा सांभली वात
वृत्ति करउ एहनइ घरे
न हुवइ लोकनउ घात. ॥५०.ए०

दूहा

मात पिता बांधव सहु
सगा-सयण कुटुंब
अनुक्रमि क्षय पाम्या तदा
जिम दूरवातइ अंब. ॥५१.ए०

रह्यउ दामन्नक एकलउ
पूरव पुण्य प्रभाव
कुंकर कृत विवरइ करी
नाठउ देखी दाव ॥५२.ए०

ढाल-५
(पारधियानी)

हिव पुरमां भमतउ थकउ रे ,
भूख करी पीडाय रे बालक ते ,
धरि धरि भिक्षा मांगता रे
त्रिपति दुहेली थाय रे बालक ते. ॥५३

तुम्हे जोवउ रे जोवउ
अचरिज एह, बालक ते
पूरव पुन्य तणइ उदइ
लहीयइ लाछि अछेह रे . .बा० ॥५४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शेठ एक तिहां किण वसइ रे, सागरपोत समृद्ध रे, बा०
आस्या घरिनइ आवीयउ रे, देखी मंदिर वृद्ध रे, बा०
॥५५. तु०

तिण अवसर तिहां विहरता रे, धरता धूनउ ध्यान रे, बा०
करइ अभिग्रह नवनवा रे, चाढइ संयम-वान रे, बा०
॥५६. तु०

मुनिवर बेहु गोचरी रे, आवइ सेठ-दुवार रे, बा०
वृद्ध कहइ लघुसाधुनइ रे, सामुद्रक अनुसार रे, बा०
॥५७. तु०

ए घरनउ पति ए हुस्यइ रे, बालक थयउ युवान रे, बा०
एक भीतिनइ अंतर रे, सेठ सुणी व्रात कान रे, बा०
॥५८. तु०

वज्राहत सम ते थयउ रे, मनमां धरीय विषाद रे, बा०
कष्ट करी धन अर्जीयउ रे, भोगवस्यइ कांइ स्वाद रे, बा०
॥५९. तु०

चारित्रीयइ बोल्यउ तिको रे, सत्यवचन नहीं जूठ रे, बा०
तउ हिव मनमां चींतवइ रे, एहनइ करुं अदीठ रे, बा०
॥६०. तु०

बीज बल्यां किम होइसी रे, अंकुरनी उत्पत्ति रे, बा०
एह विचार चित चींतवइ रे, पाडु तासु विपत्ति रे, बा०
॥६१. तु०

मोदक सखरउ आपिनइ रे, भोलवइ सागर बाल रे, बा०
सइघउ कर्यउ चंडालनइ रे, पाडइ ते तकाल रे, बा०
॥६२. तु०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मातंग एक वसइ तिहां रे , खंगिल तेहनउ नाम रे , बा०
मुह मांग्यउ द्रव्य आपिनइ रे , कहइ करि माहरउ काम रे , बा०
॥६३. तु०

दूहा

ल्यइ लाहो लखिमी तणो विलसइ भोग संयोग ,
पूरइ वंछित आपणा जन्मांतर पुन्य योग.
॥६४. तु०

ए बालकनउ वध करी रे , ले आवे अहिनाण रे , बा०
इम कहीनउ घरि आवियउ रे , सागरपोत सुजाण , बा०
॥६५. तु०

ढाल-६

खंगिल तिहांथी नीकलइ रे , बालकनइ ले साथि, सुणज्यो प्राणि ,
हणवानी बुद्धइ करी रे , खड्ग लीयो निज हाथि सुणज्यो प्राणि.
भावी ते तउ सही होय टली सकइ नहीं कोय ,
पामइ जीव कीया निज कर्म , सु० . . . . आंकणी. ॥६६

नयण देखी बालनइ रे , ऊपनी करुणा चित्त , सु०
विण अपराधइ किम हणुं रे , सेठ तणउ ले वित्त. ॥६७. सु०

ए बालइ एहनो किसुं रे , विणसाड्यउ कोइ काज , सु०
कोमलतनुं कंचनसमउ रे , एहनइ किम हणुं आज. ॥६८. सु०

मो हुंती पापी नही रे , अवर अधम इण काज , सु०
परधनलोलुप हुं थइ रे , बालक कां हणुं आज. ॥६९. सु०

ए करम करिवा भणी रे , उद्यत हुं थयउ मुढ , सु०
बालहत्या नउ ते भणी रे , पाप करुं किम गुढ.
॥७०. सु०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवउ बालक बापडउ रे, ल्युं विण धन ए पाशि, सु०
वींटी छेदी आंगुली रे, बालक नइ कहइ नाशि.
॥७१. सु०

नाठउ वचन सुणी करी रे, थरहर ध्रुजइ तेह, सु०
नयण देखी सीहनइ रे, नासइ मृगजीव लेह.
॥७२. सु०

सागरपोतनइ गोकुलइ रे, ततखणि पुहतो सोय, सु०
सुनंद नाम गोकुलतणउ रे, अधिपति तिहां किण जोय.
॥७३. सु०

सौम्य मूरति शिशु निरखिनइ रे, हरख्यउ सुनंद सुभचित्ति, सु०
राख्यउ पुत्रपणइ करी रे, सुंप्यउ गोकुल वित्त
॥७४. सु०

अनुक्रमि ते मोटउ थयउ रे, वधइ जंद(?) जयु नित्र, सु०
यौवनवय पाम्यउ तिहां रे, अधिक पितानउ हित्र.
॥७५. सु०

हिव पूठइ चंडाल लइ रे, अंगुलिनउ अहिनाण, सु०
सागर देखी खुसी थयउ रे, हिव जीवित परमाण. ॥७६. सु०

दूहा

सागर जायइ अन्यदा गोकुल देखण काजि
देखइ दामन्नक प्रतइ तिहां कण सरखइ साजि. ॥७७

छेदी अंगुलि देखिनइ देखी सुंदर गात
पूछइ सागर नंदनइ तब कहइ वीतक वात. ॥७८

सुणी सेठ मनि चींतवइ मुनि भाखी जे वाच
बाह्य विभव स्वामी थयउ तउ सही थास्यइ साच. ॥७९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तव हिव उभगवउ नहीं करिवउ कोइ उपाय
उधम कीधइ सर्वथा कारिज-सिद्धि जि थाय. ॥८०.

ढाल-७

(कपुर हुवइ अति उजलउ रे , एहनी)

मनसुं एम विचारिनइ रे , सेठ चाल्यउ तिण वार ,
पाछउ राजगृह भणी रे , धरतउ देख अपार रे.
मानव देखउ कर्म सरुप , इणवसि छइ रंक भूपरे आंकणी
॥८१. मा० देख०

हिवइ नंद कहइ तुम्हे रे , उतावला किण हेत ,
सेठ कहइ इक काम छइ रे , किण हीस्युं संकेत रे ,
॥८२. मा० दे०

बइसउ स्वामी इहां तुम्हे रे , मुझ पुत्र मूंकउ एह ,
लेख लिखी आपइ तिहां रे , चाल्य उ सेठनंइ गेह रे ,
॥८३. मा० दे०

राजगृह उद्यानमइ रे , कामदेव प्रसाद ,
वीसामउ तिहांकिण लीयउ रे , थाकउ पंथ विषाद रे ,
॥८४. मा० दे०

सूतउ तिहांकिण देहरइ रे , रूप-पुरंदर सोय ,
तेहवइ आवइ कन्यका रे , जाणे अपछर होय रे ,
॥८५. मा० दे०

सागरशेठनी ते सुता रे , नाम विषा छइ लास ,
पूजी प्रतिमा दिन प्रतइ रे , मांगइ वर धउ खास रे ,
॥८६. मा० दे०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेहवइ देखी तिहांकिणइ रे , दामन्नक गुणवंत ,
सूतउ भरनिंद्रा वसइ रे , मनमोहन दीसंत रे ,
॥८७. मा० दे०

मुद्रित कागल तातनउ रे , बाला देखी पासि ,
लेख वांचइ सुंदरी रे , प्रगट वचन परकाशि रे ,
॥८८. मा० दे०

स्वस्ति श्री गोकुल थकी रे , श्रेष्ठी सागरपोत ,
समुद्रदत्त सुतनई लिखई रे , इणि वातइ सुख होत रे ,
॥८९. मा० दे०

विष देज्यो नर ए भणी रे , वांची लेख तुरत ,
रखे विलंब करउ इहां रे , वात राखेज्यो चित्त रे ,
॥९०. मा० दे०

वांची ते पत्र शेठ-पुत्रिका रे , अंजन शलाका लेइ ,
विष शब्दइ कानो दीयउ रे , देज्यो विषा . . . .
॥९१. मा० दे०

कागल बीडी तातनउ रे , मूकी ठामो ठामि
हरख धरी आवी घरे रे , भाग्यई थास्यई काम रे ,
॥९२. मा० दे०

दूहा

सूतउ ऊठी सज थई , आवइ नगर मझार ,
आपई सागरपुत्रनइ ते कागल तिणवार. ॥९३

समाचार वांची करी , तेड्याव्या बहु विप्र
तिणहिज दीनरउ थापयीउ लगन गोधुलक क्षिप्र. ॥९४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल-८

(कहियुं किहांथी आवीयउ रे लाल , एहनी)

समुद्रदत्त हरखइ करे ले लो , करइ वीवाह मंडाण रे , सोभागी.
आरिम कारिम सहु कीया रे लो , काज चढ्यउ परमाण रे , सोभागी.
॥९५.

दामन्नक परणइ तिहां रे लो , पुण्यइ परमाण रे सो०
गोरी गावइ सोहला रे लो , कोकिल कंठवणाव रे सो०
॥९६. दा०

इण अवसरि गोकुल सुणी रे लो , विवाह केरी वात रे सो०
सागरपोतइ जन-मुंखई रे लोल , खेद धरइ बहु भात रे सो०
॥९७. दा०

मइ अनेरउ चीतव्यउ रे लो , थययउ अनेरउ काम , सो०
लहणइथी दयणइ पड्या रे लो , थयइ किम आराम रे. सो०
॥९८. दा०

दाय उपाय करीसुं वली रे लो , करस्युं एहनउ घातउ रे सो०
बेटीनउ दुख अवगणी रे लो , मारणरी करइ वात रे सो०
॥९९. दा०

रौद्र-ध्यान धरतउ थकउ रे लो , आवइ खंगिल गेहरे सो०
मारा मारी तुं ए सही रे लो , मुंह माग्यउ द्रव्य लेह रे सो०
॥१००. दा०

पहिली मुझनइ भोलव्यउ रे लो , देखाडी अहिनाण रे सो०
तिण परितुं हिव मत करे रे लो , हरज्ये एहना प्राण रे सो०
॥१०१. दा०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खंगिल बोल्यउ ततखिणइ रे लो , ते मुज दृष्टिए दिखाडी रे सो०
फलइ मनोरथ ताहरा रे लो , मारुं तेह पछाडि रे सो०
॥१०२. दा०

संकेत मारण करउ करी रे लो , देवी दहेरामांहि रे सो०
घरि आव्यउ ऊतावलउ रे लो , धरतउ मनि उछाहि रे सो०
॥१०३. दा०

परण्या देखी बेहुनइ रे लो , बोलइ शेठ वचन्न रे सो०
कुलदेवी पूज्या विना रे लो , नही पामइ सुख तन्न रे सो०
॥१०४. दा०

एम कही शेठ ऊठीयउ रे लो , भरीय चंगेरी फुल रे सो०
रवि आथमतइ चालीया रे लो , करज्यो पूज अमूल रे सो०
॥१०५. दा०

अर्चा ऊपगरण ल्येउ तुम्हे रे लो , वल्लभ अस्त्री साथि रे सो०
सागरपुत्र दीठा तिण समइ रे लो , पूछइ झाली हाथ रे सो०
॥१०६. दा०

जास्युं देवी देहरइ रे लो , करवा पूज रसाल रे सो०
पूज अवसर तुम्ह नही रे लो , वीभक्त संध्याकाल रे सो०
॥१०७. दा०

हुं जाइसि बइसिउ तुम्ह रे लो , ऊपगरण आपउ मुझ्र(ज्ज) रे लो०
नवपरणीत जास्यउ किहां रे लो , मनमां आणउ वज्ज रे सो०
॥१०८. दा०

दूहा

उपगरण लेइ चालीयउ भगनी-पति बइसारि
पूजा करीवा आवीयउ देवीय तणइ दुवारि ॥१०९

दहेरामांहे पइसता खडागइ छेदाउ सीस ,
खंगिल जाण्यउ मों भणी हिव करिस्यई बगसीस ॥११०

ढाल-९
(केकइ वर मांगइ , एहनी)

पुत्र-मरण दुसह सुणी सेठ छोड्या प्राण तुरत रे ,
भाग्य जाग्यउ पणमइ
जे परनर, विरूपउ चींतवइ ते पातइ पामइ झत्ति
भाग्य जाग्यउ पलमइ ॥१११

एह वात राजा सुणी , तेडइ दामन्नक निज पास रे , भा०
कीधउ सेठनउ गृहपति , हिव भोगवइ लीलविलास रे भा०
॥११२. भा०

अनाबाध साधइ सदा , पुरषारथ तीने नित्त रे , भा०
धरम अहोनिसि आदरइ मुख बोलइ भाषा सत्य रे भा०
॥११३. भा०

न करइ खल संगति कहे दातार न शंकारइ संग रे , भा०
पडिलाभइ मुनि सुधउ आहार वसन मनरंग रे भा०
॥११४. भा०

सगुरु समीपइ सांभलइ सिधांततणा सुविचार रे , भा०
दीन दुखी जन्मउ धरइ अनेक करइ उपगार रे भा०
॥११५. भा०

इम उत्तमि मारगि चालतां एक दिन इक भट्ट सुजाण रे , भा०
आवि भणइ गाथाइ इसी , तिण रंज्यउ सुणउ प्रमाण रे भा०
॥११६. भा०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यथा-	**गाथा**
अणुपुंखमावहंता आवया	तस्स संपया हुंति ।
सहु-दुक्खच्छपडओ जस्स	कयंतो वहइ पक्खं ॥११७
गाथा अरथ विचारिनइ	आपवीतग वात जाणी रे , भा०
लक्ष तीन दिनार दे भलुं ,	भाख्युं मनसुं सुहात रे भा० ॥११८
सकल नगरलोके कह्यउ	राजानइ एह वृत्तान्त रे , भा०
विलसइ ए धन पारकउ	तिण आपीइ मनुज अचीत रे भा० ॥११९
तेडावइ नृप शेठनइ	मूंकीनइ अनुचर एग रे , भा०
एतलउ दान किम आपीयउ	कहउ शेठ तुम्हे वडवेग रे भा० ॥१२०
कहइ वृत्तान्त ते तिण समइ	मूल थकी आप वात रे , भा०
सांभलि राजा इम भणइ	तोसुं थइ माहरउ हित रे भा० ॥१२१
पूख पुण्य प्रभावथी ,	कीधउ नगरी केरउ आधक्ष रे , भा०
सहकउ मानइ तेहनइ	देखउ धरमना फल परतक्ष रे भा० ॥१२२
इण अवसरि गुरु आवीया ,	विहरंता देस परदेस रे , भा०
दामन्नक आवी कहइ	संभलावउ प्रभुजी देस रे भा० ॥१२३
मुनिवर दीधी देसना	प्रतिबुधउ तेण तिणवार रे , भा०
जैन धरम तिहां पडवज्यउ	पालइ ते निरतीचार रे भा० ॥१२४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूहा

पूरण पाली अउखउ हुयउ महर्धिक दे रे ,
वलि नरभव पामी करी , करिस्यइ जिन ध्रम सेव रे. ॥१२५

दीक्षा लेइ अनुक्रमइ पामी केवलनाण
प्रतिबोधी बहु भविजन लहिस्यइ पूनिरवाण ॥१२६

ढाल-१०

(भरतनृप भावसुं ओ , एहनी . .)

विरति तणा फल इम सुणीए , दामन्नक कुलपुत्र विरति धरम आदर
श्रीजिनवर इम उपदेश्यो ए , फल पचक्खाण वस्त्र वि०
॥१२७

ए संबंध वखाणीयउ ए , वृत्ति आवश्यकमांहि , वि०
तिणयी एनइ ए दाखव्यउ ए , मनमां धरीय उच्छाहि. वि०
॥१२८

तुं छउ अधिकउ जे कह्यउ ए , मिच्छामि दुक्कखडताम् , वि०
जिण कारण छदमस्तनउ ए , चंचल वचन विलास. वि०
॥१२९

श्रीखरतरगच्छ दिनकरु ए युगवर श्री**जिनचंद्र** , वि०
रीहड वसइ परगडउ ए जिण प्रतिबोध्या नरेंद्र. वि०
॥१३०

तासु सीस **मतिसर** गुरु ए पुन्य प्रधान उवझाय , वि०
तसु शिष्य **सुमतिसागर** भला ए , पाठक पंडितराय. वि०
॥१३१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साधुरंग वाचकवरु ए | सकल शास्त्र प्रवीण , वि०
तासु सीस जगि जाणीय ए | पाठक **श्रीराजसार**. वि०
॥१३२

तासु सीस इणपरि भणई | **ज्ञानधरम** हितकार , वि०
सतरइसइ पइत्रीस समइए , | विजयदशमि रविवार. वि०
॥१३३

शांतिनाथ सुप्रसादथी | रचीयउ ए अधिकार , वि०
राजइ **धर्मसूरिंद**नइ ए , | रचीया खंभात मजार. वि०
॥१३४

भवियण भणतां सुख लहइ ए , | सुणतां कान पवित्र , वि०
अधिकारइ पचकाणने , | दामन्नकचरित्र. वि०
॥१३५

वीरत करो गुरुमुख विधे ए , | धरि छंडी आगार , वि०
भंगा गुण पंचाससू ए , | तुं सिद्धि पलणहार. वि०
॥१३६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ

(कौंसमां आपेल प्रथम अंक कडी क्रमांक अने बीजो अंक चरणनो क्रम दर्शावे छे.)

अउखड (१२५,१) आयुष्य
अदीठ (६०,४) अदृश्य करवुं, मारी नाखवुं
अनाबाध (१३१,१) मुश्केली (बाध) वगर
अपछरा (८५,४) अप्सरा, परी
अर्जीयउ (५९,३) कमावुं, रळवुं
अरउ (२२,१) आरो (जैन धर्ममां काळना छ भाग पाडी दरेक भागने आरो कहे छे)
असि (४२,४) तलवार
अहिनाण (७६,२) निशानी, ओळख चिह्न
अंब (५१,४) आंबो
आऊखउ (१८,३) आयुष्य
आधक्ष (१२२,२) अध्यक्ष, नगरशेठ
आस्या (५५,३) आशा
उच्छाह (१२८,४) उत्साह, उमंग
उछाहि (१०३,४) आनंद, हर्ष
कल्पांत (२१,२) प्रलय
कारिज (८०,४) कार्य
कुंकर (५२,३) कुतरा
खंजनी (२३,३३) ढोलियो, एक प्रकारनुं बेसवानुं आसन
गात (७८,२) गात्र, अंग
गेह (८३,४) गृह, घर
गोधुलक (९४,४) गोरजनो समय
चंगेरी (१०५,२) फुलदानी
झति (१११,४) झडपथी, त्वराथी
त्रिपति (५३,४) तृप्ति
दह (३०,२) झरणु
दुरवातई (५१,४) खराब पवनथी
दुहेली (५३,४) मुश्केलीथी
दीनरउ (९४,३) दिवस
ध्रम (१२५,४) धर्म
पडवज्यउ (१२४,३) स्वीकार करेलुं, कबुल करेलुं
परगडउ (१३०,३) प्रगटवुं
पुरंदर (८५,२) इंद्र
बगसीस (११०,४) बक्षिस
मुडी (३७,४) तुटवुं, कापवुं
मुढ (७०,२) मूर्ख, गमार
मेटी (२३,२) मोटी
रंज्यउ (११६,४) आनंदित थवुं, खुश थवुं

रीव (३६,४) चीस, पोकार
रीहड (१३०,३) एक गच्छनुं नाम
लाछि (५४,४) लक्ष्मी
वडवेग (१२०,४) झडपथी, मोटेथी
वरतीये (२६,३) व्रतधारण करनार, साधु
वस्तार (४९,१) वरस
वंच्यउ (२६,३) छेतरवुं, भरमाववुं
वाधउ (४८,२) मोटु थवुं, विकसवुं
विणसाड्यउ (६८,२) नुकसान करवुं
विलसइ (११९,३) वेडफवुं, दुर्व्यय करवो
विवरइ (५२,३) छींडुं, बखोल
विस्तरीयउ (४५,३) फेलावुं, प्रसरवुं
वीभक्त (१०७,४) वहेंचायेलुं आकाश (दिवस अने रात वच्चे)
व्यवहारीयउ (४४,१) वेपारी
सइधउ (६२,३) संधि
सखरउ (६२,१) साकर, खांड
सयण (५१,२) स्वजन
संवेग (२०,१) मोक्षनी अभिलाषा
सीख (३९,१) विदाय
सोहला (९६,३) मंगळगीतो, लग्नगीतो

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"सप्तदलं लेखकमलम्" : एक संस्कृत पत्र

– सं. विजयशीलचन्द्रसूरि

प्रत्येक भाषाने तेनुं साहित्य होय छे : विधविध प्रकारनुं अने विविध शैलीनुं. आवुं वैविध्य धरावतुं साहित्य पोतानी भाषाने अलंकृत ज नहि, समृद्ध पण करे छे.

संस्कृत भाषाने निसबत छे त्यां सुधी तेमां साहित्यना असंख्य प्रकारो खेडाया छे. आ प्रकारोना इतिहास पण हवे तो प्राप्त छे. आ असंख्य प्रकारोमां एक प्रकार छे : पत्र-साहित्य.

बहु प्राचीन काळथी आपणे त्यां संस्कृतमां पत्र-लेखन चालु छे. संस्कृत जे समये राजभाषा हशे, त्यारे तो बधो ज व्यवहार ते भाषामां थतो हशे, अने ते वखते पत्रो केवी रीते लखातां हशे, ते जाणवा माटे 'लेखपद्धतिः' (गायकवाड्झ ओरिएन्टल सिरीज, वडोदरा) नामे ग्रन्थ जोवा जेवो छे.

व्यवहारु पत्रोनुं स्वरूप उक्त ग्रन्थमां जोवा मळे छे. पण साहित्यिक दृष्टिए महत्त्व धरावतां पत्रोनुं संकलन तथा तेनो इतिहास हजी सुधी थयेल नथी. कोईके आ दिशामां अध्ययन करवुं जोईए, तो ख्याल आवे के आ प्रकारनुं पत्रलेखन केटला समयथी प्रवर्ते छे, अने तेमां सैके सैके के काळांतरे केवां केवां परिवर्तनो आवतां गयां छे.

पत्रसाहित्यनी वात करीए एटले सहेजे मेघदूत अने तेना अनुकरणरूपे तथा पादपूर्तिरूपे रचायेलां दूतकाव्योनुं स्मरण अवश्य थवानुं. आ खण्डकाव्योए पत्र-साहित्यने एक नवो ज वैभवी ओप आप्यो छे, एम कही शकाय.

आ साहित्यने समृद्ध बनाववामां जैन विद्वानोए पण घणो फाळो आप्यो छे, जेनी नोंध लीधा विना चाले नहि. संस्कृत दूतकाव्यो (विज्ञप्ति त्रिवेणी, इन्दुदूत, मयूरदूत, शीलदूत, सेवालेख, समस्यालेख इत्यादि) उपरांत, विज्ञप्ति पत्रो अने क्षमापनापत्रोनो विपुल जथ्थो, जे आपणा ग्रंथागारोमां तथा ज्ञानभंडारोमां उपलब्ध छे ते, आनो जळहळतो पुरावो छे. अलबत्त, घणीवार आ पत्रो मिश्रभाषा धरावतां होय छे, छतां तेमां संस्कृतनी प्रधानता / प्रचुरता तो होवानी ज.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्वाचीन जैन विद्वानोए पण पत्रव्यवहारनी अर्वाचीन पद्धति तथा भाषारीति वगेरेनो उपयोग-प्रयोग करीने मबलख पत्र-साहित्य नीपजाव्युं छे. क्यारेक गद्यप्रधान, क्वचित् मात्र पद्यमय, कदीक मिश्र पत्रो; तेमां पण छन्दो-वैविध्य, अलंकार-प्राचुर्य, रीतिवैलक्षण्य, आम विभिन्न मुद्रा उपसावतां पत्रो; क्यारेक मात्र आवश्यक वातचीत के संदेशानुं आदान-प्रदान करनारा पत्रो तो महदंशे साहित्यिक बोधथी प्रेराइने ज लखाता पत्रो; छेक १६मा शतकथी चालती आवेली, के पछी तेथीय पहेलेथी चालु थयेली पत्रसाहित्य-प्रणालीने अस्खलितपणे जीवंत राखता आ बधा पत्रो ए खरेखर तो संस्कृत साहित्यनी आधुनिको द्वारा उपार्जित समृद्धि ज गणावी घटे.

अहीं प्रस्तुत थतो पत्र ते आ परंपराने ज अनुसरतो एक रसप्रद पत्र छे. तेना पत्रलेखक छे आचार्य श्रीविजयलावण्यसूरि महाराज. वीसमी शताब्दीना प्रभावक अने प्रतापी जैनाचार्य श्रीविजयनेमिसूरिमहाराजना विद्वान शिष्यो पैकी एक ते विजयलावण्यसूरिजी. व्याकरण, तर्क, छन्द, अलंकार अने काव्य - आ तमाम साहित्यना विशिष्ट कोटिना विद्वान अने बहुश्रुत एवा आ आचार्यश्रीनी ग्रंथरचनाओ, टीकाग्रंथो तथा काव्यरचनाओ अनुपम छे. तेमणे ६० वर्ष पूर्वे संवत् १९९३मां, बोरसद(बहुरसद)थी, पोताना गुरुजी आचार्य श्रीविजयनेमिसूरिजी उपर लखेलो, पद्य-गद्यमय, श्लेषप्रधान विविध अलंकारोथी सभर आ पत्र छे. मूळ पत्र फुल्स्केप कही शकाय तेवां ७ पानामां, पेन्सिल वडे, लेखके स्वहस्ते आलेखेल होई तेने, तदनुरूप **"श्रीगुरुचरणानां चरणार्चायां सप्तदलं लेखकमलं"** एवुं नाम लेखके ज आप्युं छे. मूळ पत्रमां तो आ शीर्षकनी साथे ज पेन्सिल द्वारा, लेखके सात पांखडीओ दर्शावतुं कमल पण दोरी बताव्युं छे.

आ पत्रमां प्रारंभे पांच पद्योमां इष्ट-स्मरणपूर्वक गुरुवर्यनुं वर्णन अने तेमना प्रत्ये पोतानी विज्ञप्ति माटेनी भूमिका रचवामां आवी छे. त्यारबाद श्लेषगर्भित अने तेथी द्विअर्थी एवां घणां विशेषणो द्वारा गुरुवर्यने संबोधवामां आव्या छे. खूबी ए छे के श्लेषना माध्यमथी पोताना गुरु भगवंत पासे वर्तता साधुओनां नामो आमां वणी लेवामां आव्यां छे. वळी, श्लेषप्रचुर पदोनो बोध सुगमताथी थाय ते माटे लेखके पोतेज नीचे विस्तृत टिप्पणीओ पण लखी छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ विशेषणो ए ज पत्रनुं हार्द छे. ते पूर्ण थतां ज आवे छे वृत्तान्त-निवेदनः जेमां पोते पांच साधुओनी कुशलतानुं तथा गुरुजीना सांनिध्यमांथी नीकळ्या बाद सुखपूर्वक बोरसंद पहोंच्यानी वात जणाववापूर्वक, चातुर्मास माटे खंभात, छाणी, भरूच, झगडिया इत्यादि क्षेत्रोना श्रावक-संघोनी विनंति होई पोते क्यां चातुर्मास करवुं ते माटे गुरुदेवनी आज्ञानी अपेक्षा व्यक्त करवामां आवी छे. प्रांते वळी बे पद्य छे, अने त्यां पत्र समाप्त थाय छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री गुरुचरणानां चरणार्चायां
सप्तदलं लेखकमलम् ॥

लेखक : स्व. आचार्य श्रीविजयलावण्यसूरिः ॥

॥ आशैशवशीलशालिने श्रीनेमीश्वराय नमोनमः ॥

स्वस्ति **श्रीभृगुकच्छ**मच्छनगरं नित्यं पुनानं जिनं
गीतं गौतमगोत्रनेत्रगणिनाऽनीहं गुणानां गृहम् ।
लोकालोकविलोकिनं गतमलं लेखालयालीनतं
*नत्वा **श्रीमुनिसुव्रतं** व्रतिनतं वाणीविलासालयम्* ॥१॥

यस्मिस्तीर्थङ्कराणां शुभभवनततौ भावुकास्फालितानां
घण्टानां टङ्कृतिभ्यो दधति दश दिशो मञ्जुवाचालभावम् ।
धर्म्यैर्हर्म्यैर्युतं तं पदकजरजसा शोभमानं मुनीनां
देशं देशं विशेषं शुभवचनरसं यामदेशं महेशम् ॥२॥

पुनानानां नानानरवरनतानामनुदिनं
लुनानानां नानाभवप्रभवनानाघनिकरान् ।
धुनानानां रम्याननयनमातोऽम्बुजरमां
दधानानां नानानयनयनकान्तं प्रवदनम् ॥३॥

सुशीलालङ्कारं शिशुसमयतोऽलं कलयतां
निशाशेषेऽशेषैरसमशमशीतैः शमिजनैः ।
सदा संस्मर्याणामगणितगुणानां गृहधिया
सुधास्वादं स्वादुं वचनरसवारोपहसताम् ॥४॥

क्षमापालालीभिर्महितचरणानां चरणिनां
तपोगच्छाकाशे दशशतकराणां च विमले ।
मुदा वन्दं वन्दं सुगुरुचरणानां सुचरणौ
शिशुर्**लावण्याख्यो बहुरसद**तो विज्ञपयति ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अयि गुरुचरणा भगवन्तः ?

[1]पुरुषोत्तमानां [2]**सुदर्शन**धराणाम्, [3]लोकबान्धवानां [4]सदात**पोदया**ञ्चितानाम्, [5]कल्याणक्षमाधराणां [6]सदा**नन्दनो**द्यानभुवाम्, [7]पाक्षिकधियाऽनालिङ्गितान्त - राणामपि [8]**विज्ञान**बन्धुराणाम्, [9]सदा**पद्मा**लापहारोल्लसितान्तराणाम्,

---

(१) पुरुषेषु उत्तमानाम् । पक्षे कृष्णानामिव, लुप्तोपमा, बहुवचनं गौरव-प्रदर्शनार्थम्, एवमन्यत्रापि विज्ञेयम् ।

(२) सम्यग्दर्शनं शोभनं, **विजयदर्शनसूरिं**, शोभनानि दर्शनशास्त्राणि वा विभ्रताम् । कृष्णपक्षे सुदर्शनं चक्रविशेषं क्षायिकसम्यक्त्वं वा बिभ्रताम् ।

(३) निष्कारणजगद्बन्धूनाम् । पक्षे *सूर्याणामिव ।

(४) सदा तपसा दयया च सहितानाम् । यद्वा सदा अतपेन शान्तेन उदयेन **विजयोदयसूरिणा** अञ्चितानां पूजितानाम् । सूर्यपक्षे सता विद्यमानेन उत्तमेन आतपस्य आतपनामकर्मण उदयेनाञ्चितानां सहितानाम् ।

(५) कल्याणं क्षमां च दधानानाम् । यद्वा कल्याणमया ये क्षमाधराः साधवस्तान् दधानानाम् । पक्षे सुवर्णपर्वतानामिव मेरूणामिवेत्यर्थः ।

(६) सतां आनन्दनस्य-आनन्दस्य यद् उद्यानम्-ऊर्ध्वगमनम् उन्नतिरिति यावत्, तद्भुवां तत्कारणानामित्यर्थः, यद्वा सदा नन्दनस्य **विजयनन्दनसूरेः** उद्यानभुवाम् उन्नतिकारणानाम् । मेरुपक्षे सदा नन्दनकाननास्पदानाम् ।

(७) पक्षिज्ञानेन, विरोधपरिहारे तु पक्षपातधिया एकान्तवादधिया वा ।

(८) पक्षिज्ञानबन्धुराणाम्, विरोधपरिहारे तु विशिष्टज्ञानबन्धुराणां **विजयविज्ञा-नसूरि**बन्धुराणां चेति ।

(९) सतां या आपद्माला आपत्पङ्क्तिस्तस्या अपहारे उल्लसितं हृदयं येषां तेषां तथा, यद्वा सदा पद्मस्य **विजयपद्मसूरेः** आलापहारैः सुन्दररचनारचितगेयैः उल्लसितं हृदयं येषां तेषां तथा । पदान्तस्थस्य तृतीयस्य पञ्चमे परे विकल्पेन पञ्चमो भवतीति दत्वमेवात्रादृतम् ।

---

* सूर्यशब्देन चात्र लोकप्रसिद्ध्या आधाराधेययोरभेदोपचारेण वा पार्थिव-मणिमयं तद्विमानं विवक्षितम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[१०]विबुधाधिपाना[११]**ममृत**रसिकानां [१२]**लावण्य**लीलालयानां [१३]**गीर्वाण**गिरा गेयगुण-गणानाम्, [१४]महावनभुवां [१५]**कास्तूरा**मोददानदक्षाणाम्, [१६]वि**भक्ति**घटितानां [१७]साधुपदानाम्, [१८]श्वेताम्बरमणीनां [१९]भव्य**कमल**विबोधकानाम्, [२०]भव्य**मान**सहि-तानाम्, [२१]प्रभाव**धन**राजितानाम्, [२२]**जीत**बन्धुराणाम् , [२३]प्रसन्नवदन**सोम**सुन्दराणाम्,

---

(१०) पण्डितेश्वराणाम् । पक्षे इन्द्राणामिव । (११) मोक्षरसिकानाम् । यद्वा अमृतो **विजयामृतसूरिः** रसिकः शुभाभिलाषचारी येषां तेषां तथा । इन्द्रपक्षे सुधारसिकानाम् । (१२) लावण्यस्य सौन्दर्यस्य लीलालयानां केलिनिकेतनानाम्, सौन्दर्यैकाश्रयाणामित्यर्थः, इन्द्रपक्षेऽपि अयमेवार्थः, यद्वा लावण्यस्य **विजयलावण्यसूरेः** लीलाया विद्याविनोदादिरूपाया आलयानामाधाराणाम् । (१३) इन्द्रपक्षे सुराणां वचसा, अन्यत्र संस्कृतभाषया **प्र. गीर्वाणविजय**वाण्या च । (१४) महतोऽवनस्य रक्षणस्य, यद्वा महानां सदुत्सवानां अवनस्य रक्षणस्य च भुवां भूमिकानां कारणानामित्यर्थः, पक्षे विशालवनभूमिकानामिव । (१५) कास्तूरस्य **प्र.कस्तूरविजय**सम्बन्धिन आमोदस्य हर्षस्य, वनपक्षे कास्तूरस्य कस्तूरिकासम्बन्धिन आमोदस्य सुगन्धस्य, दाने क्षमाणाम्, वनपक्षे मृगविशेष-घटितत्वं हेतुः । (१६) साधु पदं येषां तेषां तथा, पक्षे व्याकरणप्रसिद्धशुद्ध-पदानामिव । (१७) विशिष्टभक्तिगुणसहितानाम् । विशिष्टेन **भक्तिविजयेन** सहितानाम् । पदपक्षे स्त्यादिरूपविभक्तिसहितानाम् । (१८) श्वेताम्बरसम्प्रदाये सर्वोत्तमानाम् । पक्षे विशदगगनप्रकाशकानां रवीणामिव । (१९) भव्यप्राणि-रूपकमलेभ्यो विशिष्टबोधदायकानाम्, यद्वा भव्यो यः **कमलविजय**स्तस्य विबोधकानाम् । रविपक्षे भव्यानि यानि कमलानि तद्विकासकानाम् । (२०) भव्यजनमनोहितकारकाणाम्, यद्वा योग्य**मानविजय**सहितानाम् । (२१) **प्रकृष्टभावधनेन प्रभावरूपधनेन प्रकृष्टभावेन धनविजयेन** च शोभितानाम् । (२२) जीताख्यव्यवहारविशेषेण **जीतविजयेन** च बन्धुराणाम् । (२३) प्रसन्नतायुक्त-मुखरूपचन्द्रेण प्रसन्नमुखेन **सोमविजयेन** च मनोहराणाम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२४]**सुमित्रा**नन्दनानामपि [२५]अशत्रुघ्नानाम् , [२६]क्षमाकाशानां [२७]प्रशस्य**वल्लभ**कलितानाम्, [२८]प्रज्ञाप्रकर्षतोषित**वाचस्पति-तिलका**नाम्, [२९]साधुहंसानां [३०]**सुमौक्तिक**फल-चञ्चूनाम[३१]भि**राम**सन्मान**सम्पदं** गतानाम् , [३२]**जयन्तं** [३३]**मेरु**चितं [३४]सदाचार**दक्षं**

---

(२४) **सुमित्रविजय**स्य आनन्दसाधनानाम् , पक्षे **सुमित्राया दशरथ**भार्याया नन्दनानां पुत्राणामपि । (२५) **शत्रुघ्न**नामक-**सुमित्रा**भव-**दशरथ**सुतभिन्ना-नाम् । विरोधपरिहारे शत्रुवधप्रवृत्तव्यतिरिक्तानाम् । (२६) क्षमया क्षमागुणेन काशन्ते प्रकाशन्त इत्यचि क्षमाकाशास्तेषां तथा, पक्षे क्षमा-पृथ्वी आकाशं-गगनं तयोरिव । (२७) प्रशंसनीय**वल्लभविजय**सहितानाम् । पृथ्वीगगनपक्षे प्रकृष्टैर्महापरिमाणैः शस्यैः शसयोरैक्यात् सस्यैर्धान्यरूपै वल्लभैर्नक्षत्रैः क्रमेण सहितानाम् । (२८) प्रज्ञाप्रकर्षेण तोषिता वाचस्पतितिलकाः प्राज्ञशिरोमणयो यैः, यद्वा तोषितौ **तिलकविजयवाचस्पतिविजयौ** यैस्तेषां; तथा विचक्षण-त्वेनार्च्यत्वविवक्षया वाचस्पतिशब्दस्य प्राग्निपातः । (२९) साधुर्हंस आत्मा येषां तेषां तथा, यद्वा साधुषु हंसा इव साधुहंसा उत्तमसाधव इत्यर्थः, तेषां तथा, पक्षे राजहंसानामिव । (३०) शोभनानि यानि मौक्तिकफलानि मोक्षफलानि तैः, यद्वा शोभनो यो मौक्तिको **मौक्तिक(मोति)विजय**स्तस्य फलैः सत्प्रयोजनैः विदितानाम् । विद्याचञ्चुवदत्र चञ्चुप्रत्ययः, राजहंसपक्षे शोभनानि मौक्तिकफलानि मुक्ताफलानि यत्र तथाविधाश्चञ्चवो येषां तेषां तथा । (३१) अभिरामा मनोहरा या सन्मानसम्पद् साक्षरकृतबहुमानविभूतिः, तां तथा, यद्वा अभियुक्तो यो रामो **रामविजय**स्तेन सहितो यः सन्मानो बहुमानयुक्तः सम्पद् **सम्पद्विजय**स्तं तथा, राजहंसपक्षे अभिरामं मनोहरं सत् उत्तमं मानसं देवसरोवररूपं पदं स्थानं गतानां प्राप्तानाम् । (३२) जयं विजयं तं जगत्प्रसिद्धं यद्वा **जयन्तविजयम्** । (३३) मे रुचितमभिप्रेतं, मेरुवन्निचितं **मेरुविजय**सहितं च । (३४) सदाचारे प्रचारे दक्षं निपुणं सदाचारयुक्तं **दक्षविजयं** च दधानानाम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दधानानाम् , [३५]सदा**यशोभद्र**ङ्गाणां [३६]सु**दैव**धाम्नाम् , [३७]हृदयङ्गमां [३८]**सच्चिदानन्दकनक**मालामादधानानाम् , [३९]**सुशीलजयपुण्यधुरन्धरविमल-विद्यामोक्षनन्दप्रियमहोदयगुण**साधुजनासेवितपादपङ्केरूहाणाम्, [४०]**हिमांशु**कलानां [४१]**शिवविशुद्धानन्दप्रेमकुमुद**विबोधनकृताम् ,

---

(३५) आयश्च शोभा च आयशोभम् । सतः प्रधानस्य आयशोभस्य द्रङ्गाणां पत्तनानामाधाराणा-मित्यर्थः, यद्वा सदा यशांसि च भद्राणि च यशोभद्रम् , यद्वा यशोभद्रं **यशोभद्रविजयं** गतानाम् । पक्षे सद् आयशोभं यत्र तादृशानां द्रङ्गाणां पत्तनानामिव । (३६) शोभनं दैवं भाग्यं धाम तेजो येषां तेषां तथा, यद्वा शोभनानां दैवानां **देवविजय**सम्बन्धिनां धाम्नामास्पदानाम् , नगरपक्षे शोभनानि दैवधामानि नृपसत्कमन्दिराणि देवतासत्कमन्दिराणि वा यत्र तादृशानाम् । (३७) हृदयदेशगतां मनोहरां वा । (३८) सन् यश्चिदानन्दो ज्ञानानन्दः स एव कनकमाला सुवर्णमयो हारः तां तथा, यद्वा पदैकदेशे पदसमुदायोपचारात् सन्त उत्तमा ये **चिदानन्दविजयानन्दविजय-कनकविजया**स्तेषां मालां पङ्क्ति समूहमिति यावत् । (३९) शोभनेन शीलेन जयेन पुण्येन च धुरन्धराः सुशीलनयपुण्य-धुरन्धराः, विमलो विद्याया मोक्षस्य च य आनन्दः स प्रियो येषां ते विमल-विद्यामोक्षानन्दप्रियाः, महोदया गुणा येषां ते महोदयगुणाः एवंविधा ये साधुजना उत्तमजनास्तैः, यद्वा **सुशीलविजयेन जयानन्दविजयेन पुण्यविजयेन धुरन्धरविजयेन विमलानन्दविजयेन विद्यानन्दविजयेन मोक्षानन्दविजयेन प्रियङ्करविजयेन महोदयविजयेन गुणचन्द्रविजयेन** च मुनिजनेन, आसेविते पादपङ्केरुहे येषां तेषां तथा । (४०) हिमांशुश्चन्द्रस्तद्वत् कलानां मनोज्ञानाम्, यद्वा हिमांशुना **हिमांशुविजयेन** कलानां मनोज्ञानाम्, पक्षे हिमांशोश्चन्द्रस्य याः कलास्तासामिव । (४१) शिवस्य मोक्षस्य विशुद्धो य आनन्दः तत्र यत् प्रेम तदेव कुमुदं चन्द्रविकासि कमलं तस्य विबोधनकृतां विकासकानाम्, यद्वा **शिवानन्दविजय-विशुद्धानन्दविजय-प्रेमविजय-कुमुदविजयेभ्यो** विशिष्ट-बोधदायकानाम् । चन्द्रकलापक्षे शिवस्य महादेवस्य विशुद्धो य आनन्दः प्रेम च ते एव कुमुदे तयोः विबोधनकृतां विकासकानाम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[४२] **निरञ्जनशुभरत्नप्रभोद्योतलक्ष्मीविद्यापरमप्रभाधिकस्वयम्प्रभो**ल्लासिनाम् , [४३] सुखास्पदानां [४४] सूर्यादिकलाधरसुमङ्गलबुधेज्यकविमतल्लिकामन्दचरणग्रह-साधुसेवितानाम् । चेतनचिन्तामणीनां मानवकामगवीनां जङ्गमकल्पतरूणां तत्र भवतां शुभवतां भवतामकम्पानुकम्पासम्पाततो वयं पञ्चापि कुशलिनः। [४५] नानाचरणपचरणबहुलताऽपाकृतसंतापातः सन्निधानोद्यानावनितः प्रस्थितोऽपि भवदीयबाहुच्छायापरिगृहीततया नानाविधाश्चर्यनिधानानि मेदिनीदलानि विलोक्य तत्र तत्र जिनेन्द्रपादांश्च प्रणम्य सुखेनात्रागतवान् ।

---

(४२) निरञ्जनं कलङ्करहितं शुभं यद् रत्नं तस्य यः प्रभोद्योतः किरणप्रकाशस्तस्य सकाशात्, एवं लक्ष्मीविद्याया द्रव्योपार्जनकलाया या परमप्रभा परमविकास-स्तस्याः सकाशात् अधिका या स्वयंप्रभा आत्मनैव न तु बाह्यभावेन प्रकाशनीया प्रभा तदुल्लासिनाम् , यद्वा **निरञ्जनविजयस्य शुभंकरविजयस्य रत्नप्रभविजयस्य उद्योतविजयस्य लक्ष्मीप्रभविजयस्य विद्याप्रभविजयस्य परमप्रभविजया-धिकस्य स्वयम्प्रभविजयस्य** च उल्लासिनां हर्षदायकानाम् । (४३) सुखानां दुःख-प्रतिकूलानाम् आस्पदानाम् पक्षे शोभनं खं गगनं तद्रूपास्पदानामिव । (४४) सूरय आदयो येषां पक्षे सूर्य आदि येषां ते सूर्यादयः; कलाधरा विज्ञान-विशेषकुशलाः, पक्षे कलाधरश्चन्द्रः; शोभनानि मङ्गलानि यैर्येषां वा, पक्षे शोभनो मङ्गलो भौमो यत्र ते सुमङ्गलाः; बुधैरिज्याः पूज्याः, पक्षे बुधगुरू; कविमतल्लिका उत्तमकवयः, पक्षे उत्तमशुक्रः; अमन्दोऽमन्दस्य वा चरणस्य चारित्रस्य ग्रहो ग्रहणं येषां ते अमन्दचरणग्रहाः, एवंविधा ये साधवो मुनिजनास्तैः सेवितानाम्, पक्षे मन्दचरणः शनैश्चरः; ग्रहा उक्तस्वरूपा नव खेटास्तैः साधु सम्यक् सेवि-तानाम् । (४५) नानाविधा ये चरणपा मुनिवरास्तेषां चरणस्य चारित्रस्य या बहुलता अधिकता तया अपाकृतः सन्तापो यत्र ततः, पक्षे नानाविधा ये चरणपा वृक्षास्तेषां चरणैः शाखाभिः बहुलताभिरनल्पवल्लीभिः अपाकृतः सन्तापो यया ततः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किञ्च चतुर्मासीकृते **स्तम्भनपुर-छायापुरी-भृगुकच्छ**निकटग्राम-ग्रामीणग्रामनिविवत्सित**झगडिया**प्रभृतीनां श्रमणोपासका अतीवाभ्यर्थनां कृतवन्तः, **स्तम्भननगर**निवासिनः पुनः पुनरायान्ति, अस्मिन् विषये श्रीमतां श्रीमती आज्ञैव प्रमाणम् । सपरिवाराणां पूज्यानां श्रीमतां **विजयनन्दन-सूरिकुञ्जराणां** च तनुलताकुशलोदन्तमभिलषामि । किङ्करार्हं किमपि कार्यं कृपयाऽऽदेश्यम् । शिक्षावचनसुधासारैः सिञ्चनीयोऽयं जनः ।

३ ९ ९ १
अनलनिधिनिधीन्दुज्ञापिते विक्रमाब्दे
मधुबहुलनवम्यां मङ्गलेऽलेखि लेखः ।
बहुरसद*रसातो लादिना किङ्करेण*
प्रतिवचनप्रतीक्षादत्तचित्तेन मङ्क्षु ॥१॥

वचनविरचनेऽस्मिन् गद्यपद्यानुयाते
विनयपथमतीतं बाललीलानुविद्धम् ।
सकविकथितदोषं श्लेषलेशानुसारे
किमपि च कठिनं वा क्षम्यमेतत् क्षमेशैः ॥२॥

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री सहजकीर्ति उपाध्याय रचित
श्री पार्श्वनाथ महादंडक स्तुति ॥

- प्रद्युम्नसूरि

विविध छंदोमां स्तुति-स्तोत्रो रचवानी परंपरा बहु जुनी छे. तेमां प्रचलित वसंततिलका, मंदाक्रान्ता, शिखरिणी, शार्दूला वगेरे छंदोमां तो खूबज स्तुति-स्तोत्रो मळे छे. ज्यारे दंडक छंदमां रचेला स्तुति स्तोत्रो अल्प मळे छे. शोभन मुनिवररचित चर्तविंशति स्तुतिमां छेल्ली महावीरप्रभुनी स्तुति दंडक छंदमां छे.

आ दंडक छंदना पण अनेक प्रकार छे. आ रीतना प्रकारो अन्य छंदमां आवता होय तेवुं जोवामां नथी आवतुं. तेमां जेम तेनुं स्वरूप गणवृद्धिथी वधे तेम तेनां नाम बदलाय. एक अक्षरथी लइ नवसो नव्वाणुं अक्षर सुधीना दंडक आवे छे. ते बधाना अलग अलग बंधारण प्रमाणे उद्दाम-शंख-संग्राम-मत्तमातंगलीलाकर-चंडवृष्टिप्रपात वगेरे नाम आपवामां आव्या छे.

प्रस्तुत दंडक श्रीपार्श्वनाथभगवाननी स्तुतिरूप छे. कर्ता श्रीसहजकीर्ति उपाध्याय आने **महादंडक** कहे छे. ९९९ अक्षरनुं एक चरण आवा चार चरणनो एक श्लोक. आथी मोटो दंडक न होइ शके. तेथी तेनुं महादंडक नाम पण सार्थक छे. एक रीते तो आ **मतमातंगलीलाकर**ना लक्षणमां बंधबेसे छे. तेनुं लक्षण आ प्रमाणे छे :

यत्र रेफान् कवि: स्वेच्छया पाठसौकर्यसापेक्षया
योजयत्येष धीरै: स्मृतो मत्तमातङ्गलीलाकर: ॥

रचना अत्यंत प्रासादिक छे. विषय तरीके श्रीपार्श्वनाथभगवानना जीवनने आमां समाव्यो छे. पांच कल्याणकनुं विशद वर्णन, कमठे करेला उपसर्गनुं वर्णन, कलिकुंड तीर्थनी स्थापनानो प्रसंग तेनुं वर्णन आ बधु खूबज प्रांजल शैलीमां अर्थ वांचतां वांचता ज बोध थतो जाय तेवी सुगम शब्दावलिमां अहीं मळे छे. संस्कृत भाषा परनुं तेमनुं प्रभुत्व नोंधपात्र छे. तेनुं कारण तेओनुं व्याकरण अने कोष बन्नेनुं तलस्पर्शी जणाय छे. तेओए सारस्वत व्याकरण उपर वृत्ति रची छे अने एक स्वतंत्र व्याकरणनी रचना पण करी होय तेम लागे छे. नाम ससद्वीपिशब्दार्णवव्याकरण एवुं मळे छे. अने बीजुं नाम ऋजुप्राज्ञव्याकरणप्रक्रिया ए नामनो पण ग्रंथ रच्यो होय तेम जणाय छे. वळी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक अभिधानचिंतामणीनी जेम छ कांडमां विस्तरेलो नामकोश पण तेमने रचेला ग्रंथोनी यादीमां नोंधायो छे. वळी व्याकरणविषयमांज एकादि शतपर्यन्तशब्दसाधनिका नामनी पण रचनानुं नाम मळे छे. आ रीते व्याकरण, कोष अने साहित्य तेमना खूब खेडायेला विषयो जणाय छे अने तेनो आ रचनाने भरपूर लाभ मळ्यो छे. वि.सं. १७८३नी आ रचना छे.

जेसलमेरना श्रीपार्श्वनाथभगवाननी आ स्तुति छे. आ प्रभुजीनी प्रतिष्ठा आचार्यश्रीजिनकुशलसूरिजी महाराजे करी छे.

आ महादंडक स्तुतिना कर्ता उपाध्याय श्रीसहजकीर्तिमहाराजनी गुरुपरंपरा आ प्रमाणे स्तुतिना अंतमां आपी छे : श्रीरत्नसार शि. रत्नहर्ष शि. हेमनन्दन शिष्य उपाध्याय श्रीसहजकीर्ति.

तेमना ग्रंथोनी यादीमां एक नाम महावीर स्तुति वृत्ति - एवुं एक नाम मळे छे. आ महावीर स्तुति पण कोइ विशिष्ट रचना हशे के जेना उपर तेओए वृत्तिनी रचना करी होय.

हस्तलिखित ज्ञान भंडारमां तपास करतां श्रीसहजकीर्ति उपाध्यायनी अन्य रचना मळे तो ते बहार आणवी जोइए.

प्रस्तुत कृतिनी अन्य प्रति मळी नहीं तेथी केटलांक स्थानो शंकित रही गया छे. बहु विचारना अंते आ एकवार तो मुद्रित करी देवुं जोइए तेवुं लाग्युं. अन्यथा आ छे ते पण क्यांक काळनी गर्तामां विलीन थइ जाय. तेथी आ स्वरूपे अहीं आप्युं छे.

आ स्तोत्र पंडित श्रीअमृतभाई मोहनलाल भोजक द्वारा प्राप्त थयुं छे तेनो सानंद उल्लेख करुं छुं.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ श्री पार्श्वनाथाय नमः ॥

विदितनिखिलभावसद्भूतभूतप्रभूताखिलज्ञानविज्ञानभास्वत्प्रभाकीर्ति-सन्दोहसौभाग्यभाग्योल्लसल्लोककोकस्थितिश्रेणिसन्तोषपोषप्रदं प्रीतिनीति-प्रमाणप्रमाणप्रमेयक्षमालीनपीनध्वनिध्वानसम्मोहविध्वंसदक्षं जिनं पोषमासादिमाया दशम्या दिने प्रा(१००)प्तजन्मानमालोकशोकापनोदाय सम्प्राप्ततारुण्यकं प्राप्तबोधं सुरेभ्यो सुरज्येष्ठलोकान्तिकेभ्यो दिने पोषमासा-दिमैकादशीसञ्ज्ञकेऽवाप्तदीक्षं स्फुरत्स्वर्गि-पातालवासि-स्फुट-व्यन्तराधीश-सच्चन्द्रसूर्यारसौम्या-ऽमरा-चार्यवर्यो-शनः-शौरि-नक्षत्रमाला-नभस्तारका कोटि(२००)कोटिक्षितिप्रीतिभूपालसच्चक्रवालानतांह्रिद्वयं द्वेषिकृद्द्वेषसंहार-सञ्चारसंसारपाथोधिसम्मग्नचेतः-प्रवृत्त्यङ्गिनिस्ता-रकोद्वेगवेगप्रपञ्चक्षयाक्षीणलेश्यं सकोपासुरामर्षसम्भूतभीतिप्रदाशेषवि-द्वल्लताक्षोभशोभारटद्घोरसंहारकल्पक्षमाकाशभे(३००)दावकाशच्युतश्या-मरुग्नीरधिध्वानगर्जज्जितानेकमर्त्यप्रचण्डप्रतापद्विपाष्टापदध्वानदुष्टान्धकार प्रचारोच्छलन्नीरकल्लोलमालाम्बुदोद्रेककृसमापूर्णसर्वाङ्गमाज्ञाय सर्वप्रभाराजि-बिभ्राजमानप्रमाणर्द्धिपाताललक्ष्मीसदाभोगसंयोगविख्यातनामा(४००) भिरामप्रभावोऽमितायामविष्कम्भसम्मोददायिप्रणष्टाहितध्वान्तसंरम्भ-रम्भावलीचूतसच्चम्पकाऽशोकवृक्षादिनिःसङ्ख्यवृक्षातिशायीष्ट-शोभाभरानेकवादित्रनादोच्चयानन्दकृत्पञ्चवर्णात्मकावांसलक्षाधिपत्यं दधद्देवदेवीमनोवाञ्छितार्थं ददत् स्वीयसिंहास(५००)नोत्कम्पतो ज्ञान-सम्भारतश्चापि नागाधिपः स्वीयदेवेन्द्रताप्राप्तिहेतुं प्रभुं भूरिसौख्यं क्षमाकारणं चाकलय्य प्रमोदान्निजां पट्टदेवीं समादाय शीघ्रं जलोपद्रवध्वंसनाय स्थितं पुण्यमूर्तिं जगत्क्षेमकृन्नामधेयं प्रभुं **पार्श्वनाथं** समं निर्ममं चिन्मयं मेरुधीरं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धरा(६००)नेकगाम्भीर्यधैर्यार्यसन्तोषपात्रं पवित्रं गुणश्रेणिभी राजितं त्यक्तसंसारसञ्चाररामारमाकारदेहस्थितिं प्रोल्लसद्धर्षसन्दोहमोहः फणानां सहस्रं व्यधान्मस्तकोपर्यलं छत्रसंकाशशोभाधरं वीरविक्षोभसंहारसम्बन्धिकं राजमानं चतुर्दिक्ष्वधोधः स्वकीयां(७००)शयोरा**श्वसेने**र्भवाम्भोधिनिस्तारकं कारकं सम्पदामास्पदं श्रेयसां साध्वसध्वंसदक्षं नतं नागरैः पद्मयुगं स्थापयामास भूयोऽथ पार्श्वाग्रतः सम्भ्रमाधिक्यतो नाटकं देवसूर्याभरीत्याप्सरःश्रेणि-भिर्दीयमानाप्रमाणोरुगानं कुमारीकुमारैर्जनानन्ददैर्दन्तसङ्ख्यैर्यु(८००)तं विश्रुतं सर्वतः सर्वपापप्रणाशप्रधानं निधानं गुणानां हितं सौख्यमोक्षप्रदं देवलोकेशता-चक्रवर्तित्व-शीरित्व-सभ्यार्धचक्रित्व-भूपत्व-सिद्धिक्षमा-कारणं दुन्दुभिध्वानरम्यं निधानाम्बुराशि प्रमाणाद्भुतातोद्यजातेः पृथक् सिद्धि-दिग्मानसङ्ख्यायुतैर्हारतुर्यैर्युतं (९००) पूर्णपुण्यौघलभ्यंचकारा-सुरेशश्रियं पावनां कर्तुकामस्ततः सप्तभिर्वासरै रात्रिभिश्चासुरैर्वर्षणे सर्वतः क्षीणभावं समेतेऽसुरं पापलेश्यं महावैरिणं **पार्श्वनाथस्य** पद्मावतीशो जगादेति सञ्जातरोषो महापापः(प-) दुष्टाधमेशाहमस्तोकशोकास्पदं त्वां नये(१०००)।

विहितजिनजलाशिवं कोऽस्ति रे प्राणभृद् यः समागत्य संरक्षति क्ष्मातलेऽद्यापि मूर्खोत्तमो वेत्सि किं नो जिनोऽयं चतुःषष्टिदेवेन्द्रपूज्य श्चिदानन्दभ(?)न्दस्वरूपः समाङ्गिव्रजप्रीतिदः सापराधेऽपि दुष्टाशये नैव रोषं विधत्ते जने जातुचिद् नाकिनि क्षुद्रसत्त्वे दयालीनचेताः (१००)सुखं वाञ्छति प्राणिनां भावतोऽथापहायाखिलं वैरभावं चिरारूढगूढं कृतक्लेशमान्द्या समाधिस्थितिश्लोकविध्वंसहेतुं भजागत्य चानन्तसंसारनीराम्बुधिप्रान्तमेहि प्रसिद्धोदयागारसंसारिशृङ्गारकल्पं मरुच्छाखिचिन्तामणिस्तोमसम्प्राप्ति-सन्तोषकल्पं गृहाणां ग(२००)णं सर्वसम्पत्तिभावस्य सम्यक्त्वरत्नं प्रयत्नेन वाक्यं हितप्रीतिकृत् तत् समाकर्ण्य चालोक्य तीर्थेशभक्तं महच्छक्तिभक्ति-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभाशोभमानं धराधीश्वरं प्राप्तसंवेगभावोऽसुरो मेघमाली भवाब्धौ - पतज्जन्तुजातोद्धृतौ सावधानावनेकांकुशच्छत्रशङ्खाकृतिभ्राजमानौ जिनां (३००)ह्री प्रणम्यैवमूचे जगन्नाथ पापातपक्लेशसंवेशसङ्घातकद्वेषतोऽहं भवेष्वप्रमाणेष्वसद्दुःखसन्दोहरूपेषु तिर्यग्नरामर्त्यपापार्तिभृन्नारकेषु स्वयं सम्भ्रमस्त्राणभूतं भवत्सन्निभं क्वापि न प्राप्तवानीश सद्भाग्यतोद्य-श्रितानन्दचिद्रूपमासाद्य नाजन्म मुञ्चा(४००)मि सभ्यं भवन्तं कृपापात्रमश्ला-घ्यमाचीर्णमस्तोकवैरं च निन्दामि गर्हामि नैवं पुनर्वीतरागोत्तमः क्षीणपापो विधास्यामि नत्वे(त्वै)वमावेद्य च प्राप वेश्म स्वकीयं गृहीत्वा सुबोधिं ततो नागराजोऽपि जैनाग्रतो नाटकं देवशक्त्या विधायोरु नत्वा च शिश्राय सद्मश्रियं साङ्ग(५००)नः क्षेमकृत्**पार्श्वनाथो**ऽपि पातालनाथार्चितः प्राप्तशोभोऽभि-तोऽभिग्रहं पूर्णमासेव्य निर्जित्य चोपद्रवं नीरजं नीरजाभूमिपीठे विहारं विधत्ते स्म लोकोऽथ तत्र स्वभावेन मूर्तिं नवीनां तथा चैत्यमत्युच्चमानन्दकन्दं विधाय त्रिकालं समभ्यर्चयामास लोके ततस्तीर्थ(६००)मासीद्धितं सज्जनाना**महिच्छत्र**संज्ञं जनेष्टार्थसम्पादकं तीर्थनाथःप्रभुर्लोकनिस्तारको नीलवर्णो धरामण्डलं पावनं पादपद्मोच्छलद्रेणुसम्पाततः साधु कुर्वन् कलेः पर्वतस्यान्तिके शान्तिमूर्तिः स्थितः कायमुत्सृज्य नीरागतां संसृतेर्भावयन् भावितात्मा तथाभूतमा(७००)लोक्य तं तीर्थपं तन्निवासीकरी जातजातिस्मृतिः स्वं भवं पूर्वकं ज्ञातवानेवमालोचयामास चाहं जडो वामनो मन्त्रिपुत्रो भवं हास्यमानो जनैरेकदा मर्तुकामो मुधा बोधितः साधुना तापसोऽभूवम-स्तोककालं तपस्यां विधायान्तकाले शरीरं महन्मे तपस्याफलादा(८००)यतौ स्यादितीदं निदानं दधन्मानसे मृत्युमासाद्य जातो महाकायवान् कुञ्जरोऽत्र स्थले हारितो दुष्टचित्तेन पापेन नारो भवः पुण्ययोगात् पुनस्तीर्थराजो गुणानां निवासो मयाऽदर्शि नैनं विना प्राणिनां कोऽपि निस्तारकोदुःखसंहारकर्ता जनोऽन्यः क्षमामण्डलेऽयं च विज्ञाय (९००) ते मां समुद्दिस्य(श्य)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निःसंशयं तारणायागतोऽत्राथ पूज्यो मया पूजनीयो यथाशक्ति भक्त्या यथाऽहं सुखी स्यां विमृश्यैवमानीय पानीयमच्छं तटाकात् तथा पङ्कजश्रेणिभिः पूजयामास **वामा**सुतं भावतो ज्ञातवार्तो जनाद्भूपतिस्तत्र चैत्यं चकार प्रभोरर्चयामास लोके ततः (२०००)।

सकलसुखदमिष्टमासेवनीयं जनैस्तीर्थमापद्वरं जातमेतत् **कले**रग्रतः **कुण्डं**संज्ञं ततः सोऽथ सम्यक्त्वरत्नान्वितो **मेरुतुङ्गा**भिधो हस्तिराट् पुण्यसार्थेशयुग् देवलोकं महानन्ददाय्यष्टमं प्राप शुद्धाशयस्त्यक्तवल्भः समन्ताद् जिनाधीशनिःसङ्गमूर्तिस्ततोऽन्यत्र भूमौ (१००) तपस्यां-व्यधादेवमाचीर्णशुद्धव्रतव्रातनाथोऽखिलः कर्मराशिर्महानन्त्यजन्यः क्षयं सर्वतो नीयमानो गुणस्थानरीत्या प्रधानेन शुक्लेन बिभ्राजमानोऽवलक्षे चतुर्थी दिने चैत्रमासस्य पूर्वाह्णकाले विशालं समग्रं जगज्ज्योतिरुद्योतकं-केवलज्ञानमासेदिवान् ज्ञात(२००)लोकत्रयालोकपर्यायकोऽगुप्तगुप्तप्रमादा प्रमादप्रसिद्धार्थसार्थप्रवेदी क्षणे तत्र देवा-ऽसुर-व्यन्तर-ज्योतिषां कम्पिता-कम्पसिंहासनानां स्वकीयर्द्धिसामान्यदेवीचलत्पत्ति-यानान्विता-नामभूदागमः कोटिकोटिप्रमाणाश्रितानां ततस्ते मिलित्वा जिनं चाभिवन्द्य प्रमो(३००)देन सालत्रयं रत्न-कल्याणरूप्यात्मकं चक्रुरुत्साहसंसक्तचित्ता अथो वीतरागो नमस्कृत्य तीर्थं स्थितः पूर्वदिक्सम्मुखो राजमानोऽधिकं देशनां धर्मरूपां जगज्जन्तुजीवातुकल्पामनल्पार्थजीवादिसंज्ञानमालां-विशालार्तिविद्वेषहालाहलध्वंसपीयूषनिस्यन्दतुल्यां (४००) शराग्निप्रमाणेन वाचां गुणेनाक्षयां देव-भूस्पृक्-तिरश्चां मनःसंशयोच्छेदपट्वीं स्वकीय-स्वकीयोरुभाषागतज्ञानभावेन निद्रा-बुभुक्षा-तृषोत्पत्तिनाशां ददौ-योजनाक्रान्तभूमिस्थितप्राणिनां श्रोत्रगामेवमेषोऽस्थिरो दुःखहेतुर्भवो यत्र जीवाः समे प्राप्नुवन्ति ध्रुवं जन्म (५००) मृत्युं जरां क्लेशमश्लोकमामं वियोगं तथा निर्धनत्वं मिथो वैरभावं विमातृत्व-मातृत्व-तातत्व-पुत्रत्व-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रामात्वमुख्यानि चिह्नानि भूयः परं नैव धर्मं कृताशेषसातं प्रमादेन कुर्वन्ति सम्मूर्च्छिता स्त्रीविलासाद्यसत्कर्मसु स्तोकसौख्येष्वनित्येष्वसत्कर्मबन्धे-ष्वथो प्राप्य चि (६००)न्तामणिप्रायचुल्लादिदृष्टांतदुःप्राप्यनृत्वं मनुष्याः ! कुरुध्वं प्रमादं विहायाशु धर्मं जनालम्बनं **पार्श्वनाथो**दितं मानवा एवमाकर्ण्य सञ्जातवैराग्यतः केऽपि दीक्षां ललुः केऽपि सम्यक्त्वरत्नव्रतानि स्वकायं पवित्रं विधाय प्रणम्याप्तनाथं च केऽपि स्वकीयं स्वकीयं गृहं शि(७००) श्रियुः प्रीतिभाजो नरास्तीर्थराजोऽष्टभिः प्रातिहार्यैः सदा शोभमानो विहारं विधत्ते स्म देवैः समं कोटिभिर्न्यूनभावेऽपि जाग्रद्यशावेदलोकप्रमाणैः शयैरातिपूर्वैश्चमत्कारमुत्पादयन् सर्वतः सर्वविश्वश्रियं पालयामास देवाधिदेवो महात्मा मुनीन्द्रो गुणानन्त्यभृत् क्षीण(८००)मोहो जितात्मा चिदानन्दरूपः कलावान् निरीहो जनानन्ददायी कलाकेलिकन्दक्षये कोलभूतः स्वधावाक् क्रियावान् जगन्मित्रतासेवधिः सद्विधिर्बान्धवः प्राणिनां भव्यभूतात्मनां शान्तिमूर्तिर्जगत्कीर्ति-लक्ष्मीवरस्तारकः पारगामी भवाम्भोधिमध्यस्य सभ्यार्चितः कर्मसम्मूलनो(९००)द्योगतीक्ष्णाशयो भारतक्षेत्ररत्नं जिनेशो मुनीनां सहस्राण्यथो षोडशप्रीतिभाजां सहस्रं तथा सिद्धिवह्निप्रमाणं-नतार्यार्यिकानां(णां) नराणां सुराणां तिरश्चां च कोटीश्च संरक्ष्य संसारतो भीतिहेतोः स्वयं ज्ञातनिर्वाणकालो दयालुः क्षमासागरः प्राप्तसर्वार्थसिद्धिः सुखी (३०००) ।

शिरसि शिखरिणः श्रिया राजमानस्य **सम्मेत**नाम्नः समागत्य कृत्वा च संलेखनां मासिकीं साधुभिस्त्र्युत्तरत्रिंशता राजमानो वलक्षेऽष्टमीवासरे श्रावणस्यार्धरात्रक्षणे क्षीणकर्मा विशाखास्थिते रोहिणीवल्लभे वल्लभो मोक्षलक्ष्म्या बभूव श्रितो जैनमुद्रामनङ्गो क्षयी सि(१००)द्धकार्योनिरालम्बनः सिद्धमध्यस्थितोऽनन्तचिद्दर्शनोऽनन्तसौख्यश्रितोऽनन्तसारात्मकोऽनक्षरूपारसः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्पर्शगन्धच्युत: सङ्गवेदोज्झितो देवनाथैर्मि-लित्वाऽथ सर्वैः कृतश्चन्द-नैर्देहदाहो जिनस्यास्थिराशि: क्षणादुज्झित:क्षीरनीराम्बुधौ पूर्वरीत्या समादाय दाढा: समां द्वीप(२००)नन्दीश्वरेऽष्टाहिकां जैनभक्त्या च निर्माय देवालयं शिश्रिये भक्तलोकस्तत: स्थापनार्हन्तमानन्द- सन्दोहहेत्वर्थमर्हत्समानं विधायार्चयामासुराजन्मकल्याणरत्नाश्मरूप्यादि- सद्द्रव्यजातै: पवित्रैर्विचित्रै: स्फुरत्कान्तिभि: शान्तपापं च तं समालोक्य भव्या अनेके नमस्य(३००)न्ति बोधिं लभन्ते श्रियं मोक्षलक्ष्मीं सुराज्यं शरीरं निरामं यश:कीर्तिसौख्यं च भव्यार्द्रनागार्जुनश्रीकुमाराद्यनेकाङ्गिवर्गा इव प्रीतिभाज: पुरे राजधान्यां तथा ग्रामजाते गृहे कोटिसङ्ख्यात्मके देशदेशान्तरे सर्वतो भ्राम्यता **पार्श्व**बिम्बान्यनेकानि दृष्टानि (४००) पुण्यानुभावात् समाकर्णितानि

३ ८ ७ १

प्रसिद्धानि च **स्तम्भना**दीनि संवत्सरे **लोकसिद्ध्यङ्गभूमि**(१७८३)**प्रमाणे** मया भाग्यतो जैनराजाज्ञया **जेसला**ख्ये प्रधाने च दुर्गे क्षमाधीश-सन्दोहगर्वापहारे महीमण्डलाक्षोभ्यसामर्थ्यरम्ये विपक्षैरगम्ये शरण्ये महद्धर्मशर्मप्रदं मोक्षल(५००)क्ष्म्या: पदं कृत्तसर्वापदंशस्थितिक्षेम-कृल्लोकशोकापहारि प्रमोदास्पदं चैत्यमुच्चं प्रभो: **पार्श्वनाथ**स्य दृष्टं सदिष्टं क्षमाकारणं पापसन्तापनिर्व्यापनेऽलंभयक्लेशनिर्नाशकं यत्र सर्वत्र बिम्बानि रम्याणि पुण्यानुयायीनि सन्त्यस्त-पापानि भूयश्चतुर्दिक्षु देवालयानां (६००) लघूनां द्विपञ्चाशदङ्गिप्रणम्यास्ति यत्राद्भुतैर्बिम्बचक्रै: सदा शोभमाना पुनर्यत्र **नन्दीश्वर**द्वीपवर्त्यार्हतागारसङ्ख्याकृतिर्वर्तते भव्यलोकैर्नता मुक्तिमार्गे यथा प्रोच्चमाङ्गल्यमालेव विभ्राजते तोरणश्रेणिरासाच्छबिम्बैर्युता माननीया महेभ्याङ्गिभिर्यत्र भाग्योद(७००)योद्रेकरूपं गुणानां गृहं मोक्षलक्ष्म्या: सुपुण्ड्रोपमं तोरणं द्वारवर्ति प्रदीपोपमं स्वर्गमार्गप्रदे मन्दिरस्याग्रत: शिल्पिभिर्निर्मिताभि: प्रशस्योत्तमै रम्यपाञ्चालिकाभिर्विचित्राभिरानन्ददाय्यस्ति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्सूरिमुख्याकृति-क्षेत्रपाला-ऽम्बिका शासनाधीश्वरीमूर्तिभी राजितं (८००) यत्र पार्श्वस्य पारङ्गतस्याच्छमूर्तिं चलत्पुण्यमूर्तिं सुरश्रेणितेजःश्रितं नागराजानुभावान्वितां कल्पवृक्षोपमां कामितार्थप्रदे मोक्षनिःश्रेणिभूतां **जिना**द्यन्त-**कौशल्य**सूरीशमुख्यैः प्रतिष्ठां सुनीतां महत्सूरिमन्त्रेण जाग्रत्प्रतापां विलोक्याच्छपात्रं प्रमोदस्य जातं मनः प्री(९००)तिभाग् मे सुलब्धो भवो मानुषोऽद्याथ हे नाथ ! विज्ञसिरेषा पदि(वि)त्रा महादण्डकेनाश्रिता तावकीना नवीना कृता **रत्नसारान्तिषदत्न हर्षो**ल्लस**द्धेम**सन्न**न्दनानां** प्रसादात् **स्वभावादिसत्कीर्ति**नाम्ना विनेयेन सभ्यं पदं वाचकं बिभ्रता सज्जनानां प्रमोदाय भूयाः सदा (४०००) ॥१॥

इति श्रीजेसलमेरुदुर्गस्थश्रीपार्श्वनाथस्य
महादण्डकमयी स्तुतिः समाप्तिमगात् ॥
॥ संवत् १७८३ ॥
श्रीसहजकीर्तिउपाध्यायरचितमिदम् ।

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक पत्र

मुनि भुवनचन्द्र

C/o. चुनीलाल मेगजी वोरा

मोटी खाखर - ३७० ४३५

कच्छ - गुजरात.

ता. ५-४-९८

आदरणीय संपादको,

अनुसंधान-११ नी लेखसामग्री वैविध्यसभर छे । मुद्रणमां विविध टाइप-साइझोनो उपयोग हवे थाय छे ते सारुं छे। एनाथी लखाणनुं एकधारापणुं तो टळे ज, ध्यानार्ह भागो झट नजरे पडे, विषय विभागो विशद थाय ।

पञ्चसूत्रना कर्ता विशे ऊहापोह करतो आ.श्री शीलचन्द्रसूरिनो लेख विद्वानोनुं ध्यान खेंचशे । जैन साहित्य अने जैन इतिहासनी एक अनिर्णीत बाबत आ लेखमां शास्त्रीय रीते चर्चाइ छे। पञ्चसूत्रना कर्ता अन्य कोई नहीं पण श्री हरिभद्रसूरि ज छे - ए विधानना समर्थनमां पुष्कळ आंतर-बाह्य प्रमाणो लेखके रजू कर्यां छे। वृत्तिना अंते "समाप्तं पञ्चसूत्रकं व्याख्यानतोऽपि" ए वाक्यमां आवता "अपि" शब्दनी चर्चा विचार करवा प्रेरे एवी छे। आ प्रकारनुं वाक्य टीकाकारनी कलममांथी कदापि टपकी शके नहीं अने 'अपि' शब्दनी उपयुक्तता अन्य कोई रीते स्थापित थई शके नहीं। आ वाक्य तरफ संशोधकोनुं ध्यान केम नथी गयुं ए वात नवाई पमाड़े एवी छे। गणधर-सार्ध शतकनी वृत्तिमां पञ्चसूत्रनो हरिभद्रकर्तृक तरीकेनो उल्लेख तथा उपाध्यायजी द्वारा 'धर्मपरीक्षा'मां थयेलुं विधान - ए बे पण सबळ प्रमाणो छे। बृहट्टिप्पनिकाना उल्लेखने सूक्ष्म दृष्टिए तपासीने लेखके काढेलो निष्कर्ष पण, अन्य प्रमाणोना प्रकाशमां, सुसंगत बने छे। लेखके आ संदर्भमां उत्पन्न थता अन्य आनुषंगिक प्रश्नोनी पर्याप्त विचारणा करी छे । भाषाकीय विचारणा पण थई छे । 'समराइच्चकहा'ना गद्य साथे पञ्चसूत्रना गद्यनी तुलना नथी करी, पण ए बन्ने ग्रन्थ जेमणे वांच्या हशे तेमने एक ग्रन्थ वांचतां बीजानुं स्मरण अवश्य थयुं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हशे। सांकळना अंकोडानी जेम एक पछी एक, श्रेणीबद्ध आवतां टूंकां वाक्यो ए श्री हरिभद्रसूरिनी गद्यशैली छे।

विषय, शैली अने भाषानी दृष्टिए श्री हरिभद्रकृत अन्य ग्रन्थो साथे पञ्चसूत्रनुं साम्य ऊडीने आंखे वळगे एवुं छे। पञ्चसूत्र जो पूर्वाचार्यनी कृति होय तो श्री हरिभद्रनी मौलिकता पुनर्विचारने पात्र ठरे। बीजी बाजु, तेओश्रीनी आगवी मुद्रा स्वयंसिद्ध छे। आ संजोगोमां पूर्वाचार्यकृत एक ग्रन्थनी छाया हारिभद्रीय विपुल वाङ्मय पर पडी एम मानवा करतां, हारिभद्रीय मुद्रा जेमां स्पष्ट अंकित छे ते कृतिने श्री हरिभद्रनुं ज सर्जन मानवुं वधु तर्कसंगत छे - लाघवभर्युं छे। एना समर्थनमां अन्य प्रमाणो जोईए, अने ते श्री शीलचन्द्रसूरिजीए एकत्र करी आप्यां छे। आ परिश्रम एक महत्त्वना प्रश्नना उकेल तरफ दोरी जशे एमां शंका नथी।

आ अंकमांनी सामग्रीमांथी पसार थतां जे कंइ नजरे चड्युं / सूझ्युं ते अहीं नोंधुं छुं।

चारूपमंडन श्री पार्श्वनाथस्तुतिना छेल्ला श्लोकमां (पृ. ५) प्रतिलिपि करती वखते अथवा बीबांगोठवणी वखते अक्षरो पडी गया छे। प्रथम चरण कंइक आ रीते होवुं घटे —

इत्थं स्तुतं सुयमकैर्यमकैरवेन्दुं . . . .

'हाल्लारदेशचरित्र'ना ४३मां श्लोकमां (पृ.४१) 'याम' शब्द छे ते हालारी/ काठियावाडी 'जाम'नुं संस्कृतीकरण छे। जामनगरना राजाओ 'जाम' कहेवाता।

'गणधरहोरा'नी वाचनामां केटलाक शब्दो सुधारवाना थाय छे। श्लोक ४ — 'गहणसन्नं'ने स्थाने शक्य पाठ 'गहाण सन्ना' — "ग्रहोनी संज्ञा" होइ शके। श्लो. ७ — "आरो य पइट्ठिओ" एम वांचवुं योग्य लागे छे। 'आर' मंगळना ग्रहनुं नाम छे। श्लो. ९मां, एटलेज, "आरो" साचो पाठ छे। 'आरा'नी कल्पना करवानी जरूर नथी। श्लो. १३ — "मण देवाणं" - अहीं 'मणु-देवाणं' होइ शके। श्लो. २०मां 'वलंतं' छे, ते 'जलंतं' होवानी पूरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्यता छे। श्लो. १२मां 'जलंतं' आवे ज छे। श्लो. २३ – 'वणिविट्ठ' ने स्थाने 'विणिविट्ठा' कल्प्युं छे. परंतु 'व[य]णिविट्ठा' कल्पवुं वधु योग्य लागे छे।

'जिनपतिसूरिपंचाशिका' मूळ मात्र आपवामां आवी छे। कृतिपरिचय तो नथी ज, आवश्यक एवो प्रतिपरिचय / प्रतिनो स्रोत पण निर्दिष्ट नथी। संपादकोए आ बाबत आग्रह राखवो जोईए। गुरुभक्ति-रंजित आ रचना ऐतिहासिक दृष्टिए महत्त्वनी छे, साहित्यिक दृष्टिए रसिक छे। आवी सुंदर रचना घणी अशुद्ध रही गई छे, संशोधके हजी वधारे श्रम करवो जोइतो हतो।

श्लोक २ (पृ. ३२)ना प्रथम बे चरण आम वांची शकाय –

माणिमणं **व समुन्नय**-ममायिवयणं व सरलमभिवंदे।

श्लोक १८ (पृ. ३३) –

जं **सेसवे सयंवि** य मणं आसि तुह न चुज्जं।

जेणन्नवो(**बो**)हि(**ह**)णिज्जा . . . .

श्लोक २४ –

निदंइ **मं जणपुरओ** . . . .

श्लोक ४२मां एक महत्त्वनो शब्द खूटे छे –

विक्कमनरेसरा उ दसहिय (**सएसु** ?) गएसु वासाणं।

डॉ. नारायण मं. कंसारानो लेख, बीजी रीते उत्तम होवा छतां, 'अनुसंधान'ना व्यापमां ए आवे के केम-एवो सवाल उद्भवी शके। 'अनुसंधान'मां अनुसंधानात्मक-संशोधनात्मक सामग्री आपवानी मर्यादा इच्छनीय न गणाय? प्रकाशित थता प्राचीन साहित्यनी समीक्षा आ पत्रमां आपी शकाय, अने खास आपवी जोइए, परंतु अनुप्रेक्षा-प्रेरणा-विचार-विवेचन जेवी सामग्री अन्य पत्रो माटे छोडी देवी जोइए एम नथी लागतुं ?

मुनि भुवनचं[द्र]

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Some Notes on the Bauddha Sahajayānī Siddha-Nātha Tradition

H. C. Bhayani

1. Saraha's मातृका-प्रथमाक्षर-दोहक in Apabhraṁśa

Mātṛkā or Kakka (The Alphabet) has been a favourite type or genre in early Indian regional literatures. In 1997 we edited and published its earliest known instance so far, viz. Bārahakkhara-kakka of Mahacandra Muni. A paper mostly based on its Introduction was read at the Eighth International Conference on Early Indian Regional Literatures, held at Venice in 1996. Therein we had drawn attention to the fact that in the biography of Gautama Buddha given in the Lalitavistara it is stated that when the teacher began teaching the Alphabet to the boy Gautama, he immediately recited verses in which the first words began with the letters of the Alphabet in their traditional sequence.

Now the Bārahakkhara-kakka was in post-Apabhraṁśa language and although we had listed the Mātṛkā poems known till now in Gujarati, Rajasthani, Hindi etc. no instance of an Apabhraṁśa Kakka was known. Somehow we missed one such Apabhraṁśa poem, that preceded Mahācandra's poem by several centuries and that was published as far back as 1957 ! Only quite recently I came to know about a Buddhist Sahajayānī Siddha's poem belonging to this genre. In his Dohākośa Rahul Samkrityayan has published (pp.129-139), on the basis of the Tibetan Tanjur (Stan'gyur), that is an old collection of Tibetan translations of Indian texts, the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Tibetan translation of Saraha's Ka-kha-Dohā (from the Tantra Section of the Tanjur). The original Apabhraṁśa text is lost. Samkrityayan has given the Tibetan text in Nāgarī characters and has given its Hindi translation. Saraha's works are dated in the eighth century. I have no knowledge of Old Tibetan and I consider Samkrityayan's translation quite reliable.

Below I give some idea of Saraha's Mātṛkā poem. Like many poems of this genre its original was in Dohā metre. The Hindi translation of the Tibetan Colophon reads as follows : इति क-ख दोहा महायोगेश्वर श्री महान् ब्राह्मण सरहमुखोक्त समाप्त । कोसल देश-जन्मा महायोगी वैरोचनवज्र के मुख से कथित स्व-अनुवाद ॥ The poem had 34 Dohās. They covered the letters क to क्ष. In the introduction to the Bārahakkhara-kakka we have given information about the different alphabetical modes adopted by the various poems. Some follow the sequence of consonants only, others have verses beginning with syllables i.e. either each consonant followed by *a* and *ā*, while others have verses in which each initial consonant is followed in order by the whole series of vowels beginning with अ and ending with अः. The last type is known as बारह-अक्खरी. The earlier ones are known as ककहरा in Hindi or मातृका-प्रथमाक्षर-दोहक in Sanskrit. Saraha's poem was of the latter type. It seems to have each half of the Dohā in which the first word began with the consonants क etc. in sequence. The contents of the poem

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

pertains naturally to the Sahajayāna ideas and beliefs and it is in the familiar Sahajayānī terminology.

In the Ka-kha-dohā in each half of the Dohās the first word after the particular letter seems to have begun with the same letter.

1. कक्का : (a) कमल ; (b) कुमारी.
2. खक्खा : (a) ख-सम ; (b) खाहि.
3. गग्गा : (a) गगण ; (b) गमणागमण.
4. घग्घा : (a) घणघण ; (b) घरिणी.
5. ङङा : (a) निज सहाव ; (b) निरंतर.
6. चच्चा : (a) चउथ आणंद ; (b) चउ-खण.
7. छच्छा : (a) छड्डहो ; (b) छड्डि.
8. जज्जा : (a) जम्म-जरा ; (b) जसउ.
9. झज्झा : (a) झज्झ कुसुम (= बहु कुसुम) (?) ; (b) ______
10. xx xx xx xx
11. टट्टा : (a) (?) ; (b) टालमाल.
12. ठट्ठा : (a) ठवणि ; (b) _
13. डड्डा : (a) डोंबी ; (b) डमरु.
14. ढड्ढा : (a) ढलइ ; (b) ढलिअ.
15. णण्णा : (a) णिज-सहाव ; (b) णिज-घरिणी.
16. तत्ता : (a) ति-काय ति-गंथ ; (b) तुल्ल.
17. थत्था : (a) थिर करि ; (b) थाण.
18. दद्दा : (a) दुइ सरह हो वाय ; (b) दुइ बिंदु.
19. धद्धा : (a) धोबी ; (b) धोबिणि.
20. नन्ना : (a) नाणा-पआर ; (b) नास-भअ.
21. पप्पा : (a) पंच अमिअ ; (b) पउम-पुप्फ.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

22. फफ्फा : (a) फडकार (?) ; (b) फडकार.
23. बब्बा : (a) बणह बंभपुफ्फ ; (b) बस-मज्झे.
24. भब्भा : (a) भग ही भग ; (b) भुंज.
25. मम्मा : (a) मइरा ; (b) मूल-चित्त.
26. यय्या : (a) जावहिं ; (b) जइसउ.
27. रर्रा : (a) रवि-ससि ; (b) रसणा.
28. लल्ला : (a) लेहु पवणहो ; (b) ललणा.
29. वव्वा : (a) वर वारि ; (b) वज्रजोइणि (?).
30. शश्शा : (a) सहाव ; (b) सरह.
31. षष्षा : (a) सहजे ; (b) सम-विसम.
32. सस्सा : (a) सम एउ सव्व ; (b) सहजाणंद.
33. हह्हा : (a) हास ; (b) हरहर.
34. क्ष-क्षा : (a) क्षले ; (b) क्ष-क्ष.

Saraha's Mātṛkā poem provides us definite evidence of there being an early tradition of writing such poems in Apabhraṁśa.

*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

2. Were Śānti and Bhusaka the same or different ?

We know very well that regarding the identity, succession, chronology, life, authorship etc. of the Siddha-Nāthas there is so much disagreement among various traditional lists and legendary accounts, that largely we have to depend upon speculation and guess-work to separate facts and beliefs.

With respect to Śāntipāda and Bhusukapāda, we are faced with two problems : First, whether these were the names of the same person or of two different persons ? Second, who were they in their early life, prior to renouncing the worldly life ? In his treatment of Śāntideva's Śikṣāsamuccaya and Bodhicaryāvatāra, Winternitz has touched upon these problems on the basis of the traditional accounts and views of earlier scholars. I quote him below :

'As the most prominent among the later teachers of Mahāyāna Buddhism, who also shone as poets, we have to mention Śāntideva, who probably lived in the 7th century A.D. According to Tāranātha, he was born in Saurāṣṭra (in the present-day Gujarat) as a king's son, but was instigated by the goddess Tārā herself to renounce the throne, whilst the Bodhisattva Mañjuśrī, in the form of a Yogin, initiated him into the sciences. He acquired great magic powers, and was for a time the minister of King Pañcasiṃha, but finally he became a monk. He was a pupil of Jayadeva, the successor of Dharmapāla in Nālandā. Tāranātha ascribes to him

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the works Śikṣā-Samuccaya, Sūtra-Samuccaya and Bodhicaryāvatāra.[1]

Now there are two pieces of evidence which so far have not come to the attention of the scholars, and which inditcate that there is some basis for the tradition that Śāntideva was a prince in his early life and that he was the same person who was called Bhusuku in several Caryās as their author.

In Caryā no. 41 Bhusuka is referred to as राउत्त (= राजपुत्र) (राउत्तु भणइ कटरि भुसुक्कु भणइ, verse no.5). The same is the case with Caryā no. 43 (भुसुकु / राउत्तु भणइ).

In the अपभ्रंश वचन given in the fifth issue of *Dhīḥ*, published from Sarnath, there is cited an Apabraṁśa passage (p. 34) from the Sekoddeśa-Commentary in which twice the names of Bhusuka and Śānti occur and there is

---

1) Tāranātha, Geschichte des Budhdismus, übers. von *Schiefner*, p. 162 ff. The biography of Śāntideva, which Haraprasāda *Śāstrī* (Ind.Ant.42, 1913, pp. 49-52) found in a Nepalese manuscript of the 14th century, agrees in the main with Tāranātha. In this MS. Rājā Mañjuvarmā is mentioned as his father. It is said here that he had the additional name "Bhusuka", because he was well versed in the meditation called "Bhusuka". He is also said to have been the author of a Tantra, and Haraprasāda found works of the Vajrayāna school and songs in the Old Bengali language, which are attibuted to a certain Bhusuka. This biography, too, speaks of *three* works of Śāntideva. The assumption of P. L. Vaidya (Etudes sur Āryadeva, p. 54) that by Śikṣā-Samuccaya, the text of the Kārikās is meant, and by Sūtra-Samuccaya the commentary containing the quotations from Sūtras, is indeed very tempting : nevertheless, I regard it as far more likely that the statement about the three works of Śāntideva is merely based upon an erroneous interpretation of the verses Bodhicaryāvatāra V.105 f., where Śāntideva recommends the study of his Śikṣā-Samuccaya or the Sūtra-Samuccaya of Nāgārjuna; s. *Winternitz* is WZKM 26, 1912, 246 ff. *Cf.* also P. L. Vaidya, l. c., p. 54 ff. and Kieth, HSL, pp. 72 f., 236.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

no mention of Guru-śiṣya relation between them, as for example we find in the case of Kṛṣṇapāda's Gīti (Samkrityayan's Dohākośa, p. 369), wherein he specifically mentions Jālaṁdhari as his Guru.

These facts clearly point out that Śānti was a Rājaputra and that Bhusuka and Śānti were probably different names of the same person.

One point, however can be looked upon as going against such a conclusion. In the Caryāgītikośa, Caryā no.15 and 26 bear the name of Śānti, while Caryā no.6, 21, 23, 27, 30, 41, 43 and 49 bear the name of Bhusuka. This would clearly indicate that like other authors of the Caryās Śānti and Bhusuka were different Siddhas. In the list of Saraha's Guru-paraṁparā given by Samkrityayan on p. 21 of the Introduction Bhusuka bears the number 41, while Śānti is numbered 12. Thus the problem of identification remains unsolved so far.

*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

3. One more instance of the Jhambaḍaka Song in Apabhraṁśa

In my note on occurrences of the झम्बडक-गीत (Anuṣaṁdhān, 4, 1994, p. 24-25 ; 5, 1995, p. 82-83 ; reprinted in शोधखोळनी पगदंडी पर 1997, p. 191-193), I had noted two instances, one from the प्रभावकचरित (1278 A.C.) and one from the विनोदकथासंग्रह (14th century), which is characterized by a ध्रुवपद (कहउं जि भरडइ जं जं किउ).

From the क्रियासमुच्चय the following passage is quoted in the अपभ्रंशवचनसंग्रह (Dhīḥ, p. 35) (the corrupt text is restored) :

हुउ देक्खु घणु संसार-तरु ।
दंदालिंगण-जोग-धरु ॥
हेवज्र तुहुं तेन्नाहूं तेन्ना तें तें हूं ॥१

सुर-णर-वंदित-चरण-धरु ।
करु महु xx xx तोसु करु ॥
हेवज्र तुहुं तेन्नाहूं तेन्ना तें तें हूं ॥२

भाव-विमुक्क विसेस-गुण ।
xx xx णमु णमु हे ॥
हेवज्र तुहुं xx xx xx xx xx x ॥३

This instance is noteworthy in that it has a musical ध्रुवपद with song syllables, which must have been characteristic of the Jhambaḍaka song. We have here the actual song-form preserved.

In this connection it is significant to note that in

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Svayambhū's Apabhraṁśa epic Paumacariya (end of the ninth century) तेण तेण तेण चित्तें occurs as a ध्रुवपद with each Pāda of the Apabhraṁśa metre Jambheṭṭiā (Sandhi 81, Kaḍavaka 1). This is similar to तेन्ना हूं etc. we find in the lines of the Jhambaḍaka song discussed here. I think these are instances of what is called तेन्ना गीति in musicological texts like the बृहद्देशी, and that mode of performance continues till today under the name of तराणा in the North Indian musical tradition. (See, Bhayani, Indological Studies I, 1993, p. 95-99).

*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

4. On the Names of Some Siddha-Nāthas

We have with us various published lists of the Siddha-Nāthas, some partial and some complete, some comparatively early and some later and modernized. The traditional figure of eightyfour is quite obviously the result of frequent revisions and alterations. The forms of many names that figure in the lists are evidently corrupt and modernized. Even then, I think it is worthwhile to speculate about their linguistic sources.

A large number of the names are in Sanskrit. They are usually respectable and complimentary. To illustrate :

आर्यदेव (प्रा. अज्जदेव), कृष्ण (प्रा. कण्ह), घंटा, जयनंदिन् (प्रा. जयणंदी), जालंधरिन्, नागार्जुन, महीधर (प्रा. महीहर), मेखला, राहुल, वीणा, शान्ति (प्रा. संति), सर्वभक्ष.

But several have Prakritic form and a number of them are of obscure origin. They are perhaps based on regional usages. It is proposed here to discuss a few of all the three types, because they have some significant social implications.

कंबलांबर (abridged कंबल), कंबली : He who wears a woolen blanket. (सं. प्रा. कंबल. IAL. 2771, 2773).

कंकण : He who wears wristlet.

कुक्कुरि : He who keeps a dog (सं. कुर्कुर, प्रा. कुक्कुर dog. IAL. 3329).

गुड्डुरि : He who lives in a tent (प्रा. गुड्डुर 'tent').

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घंटा : He who puts on little bells.

चट्टिल : He who is fond of tasting. (प्रा. चट्ट 'lick'. IAL 4573).

चर्पट : Palm of hand; small flat piece of wood (• सं. चर्पट IAL. 4696).

जालंधरि : He who carries a fishing net, a fisherman.

डेंगी : A boatman (* डेंग small boat, canoe. IAL. 5568).

डोंबी : A man of the Ḍomba caste (सं. प्रा. डोंब IAL. 5570).

ढेंढण : (?).

तंती : He who plays on the lute or he who knows Tantras. (Compare वीणापाद).

तेल्लो : An oilman (सं. तैलिक, प्रा. तेल्लिअ. IAL 5963).

भादे : सं. भद्रदेव (प्रा. भद्ददेअ > भद्दे > भादे). The form belongs to the post-Apabhraṁśa stage.

भुसुक्क : Chaff (भुस + diminutive उक्क) (सं. बुस, प्रा. भुस. IAL. 9293).

मेखला : Girdle.

लूई : सं. लूता 'spider ; a cutaneous disease.' IAL. 11093.

विरूवा : Ugly (सं. विरूपं, प्रा. विरूव).

शबर : A man of the Śabara tribe (सं. शबर , प्रा. सबर, सवर a wild, mountainous tribe).

सरह : A wild animal (सं. शरभ, प्रा. सरह, IAL. 12331).

हालि : A ploughman (सं. हाली, प्रा. हाली).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Remarks :

1. The names तंतीपाद and वीणापाद indicate close association with those musical instruments. कुक्कुरपाद, गुड्डरिपाद, घंटापाद, कंकणपाद, कंबलपाद, चर्पटपाद, मेखलापाद indicate characteristic association with those objects, things, etc.
2. चट्टिलपाद indicates a characteristic habit.
3. जालंधरिपाद, डेंगिपाद, डोंगीपाद, तेल्लोपाद, हालिपाद indicate low caste professions.
4. डोंबीपाद, शबरपाद indicate the caste.
5. सरहपाद (शरभपाद) is a flattering name like सिंहदेव, वृषभदेव etc. ढेंढणपाद, भुसुकुपाद, लूईपाद are obviously pejorative assumed names.

Of these the names of the first and second category were possibly given by the devotees and followers. The third and fourth categories are interesting in this sense that they suggest that the Siddhas were closely associated with the lower castes and tribals. Samkrityayan, Majumdar and others have made observations about the changed social mileu and the intimacy of the Siddhas with the lower stratum of the society.

Names of the fifth category can be explained as either the childhood bye-names or more probably to show that they considered their worldly selves as of little value.

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सांकळियुं : "अनुसंधान" - १ थी १२ अंकोनुं

तैयार करनार : साध्वी श्री दीप्तिप्रज्ञाश्रीजीनां शिष्या
साध्वी श्री चारुशीलाश्रीजी

"अनुसंधान"नी प्रकाशन-तवारीख : अंक १-२, १९९३ ; ३, १९९४ ; ४-५, १९९५ ; ६-७, १९९६ ; ८-९-१०, १९९७ ; ११-१२, १९९८.

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
अ			
* अखंड दीवानो विस्तरतो उजास		प्रद्युम्नसूरि	९ । ९५-९६
* श्री अजपुर (अजार) नगरमंडण पार्श्वनाथ स्तोत्र (भाषा)	*धर्ममंगल-शिष्य	विजय शील-चन्द्रसूरि	७ । ४३ - ५०
*** अन्वेषण**			१ । १ - २१
० **केटलाक प्राकृत शब्दो अने प्रयोगो**		ह. भायाणी	
० निंदावाचक सं. 'आदह्'		ह. भायाणी	१ । ११
० प्रा. 'उक्कुक्कुर'			१ । १३
० आश्चर्यवाचक क्रिया-विशेषण 'कटरि'			१ । ९-१०
० फेट्टा 'ढींक'			१ । १३
० निर्धारण वाचक क्रिया-विशेषण 'बले'			१ । ९
० प्राकृत 'भेज्जलअ'			१ । १४
० सं. 'शीन' थीजेलुं, थीनुं			१ । ११-१३
थोडाक अपभ्रंश परंपराना भाषा प्रयोग		बळवंत जानी	१ । १८-१९
पूर्ति		ह. भायाणी	१ । १९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
थोडाक विशिष्ट शब्दो		नारायण कंसारा	१ । १५-१७
प्रथमानुयोगना चौदमी शताब्दी लगभगना बे उल्लेख		शीलचंद्र - विजयजी	१ । १
पूर्वीय प्राकृतोना एक तद्धित प्रत्यय विशे प्रत्यय 'क'		के. आर. चन्द्र	१ । २-३
संबंधक भूतकृदन्तनो प्राकृत प्रत्यय 'इ'-'उ'		के. आर. चन्द्र	१ । ३ - ५
'सुडाबहोंतरी' अथवा 'रसमंजरी'	रत्नसुंदर सूरि	कनुभाई शेठ	१ । २०-२१
० हेमचन्द्राचार्ये आपेल त्रण उदाहरणो विशे		ह. भायाणी	१ । ५ - ८
० 'जिण्णे भोयणमत्तेओ'			१ । ७
पूरक नोंध		शीलचन्द्रविजय	१ । ७
० 'शमणे भयवं महावीले'		ह. भायाणी	१ । ५-६
० सिंहपद छंदनुं उदाहरण			१ । ८
*** अनुपूर्ति**			
जैन आगमोनी भूलभाषा विशे परिसंवाद			९ । ११७-१[illegible]
* अनुमानमातृका सावचूरि		मुनि कल्याण-कीर्तिविजय	७ । ८५-८८
* अपभ्रंश दोहा		मुनि भुवनचंद्र	६ । ६८-७०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. – पत्र
* अज्ञातकर्तृक अर्हत्प्रवचन-सूत्र सविवरण		पं. शीलचन्द्र-विजय गणि	५ । ८८-१०२
*** अवसान नोंध**			
० डॉ. चन्द्रभाल त्रिपाठी			७ । १३१
० डॉ. अर्नेस्ट बेन्डर			७ । १३१
० डॉ. मधु सेन			७ । १३२
० डॉ. र. ना. महेता			८ । १३५
० रमेश मालवणिया			८ । १३५
० संस्कृत रंगमंचना रंगमां रोकायेल परिव्राजक गोवर्धन पंचाल			९ । ११६
आ			
* आजना विज्ञान युगमां जैन जीवविचारणानी आहारक्षेत्रे प्रस्तुतता		ड़ॉ. नारायण म. कंसारा	११ । १०२-९
उ			
* उत्तरकालीन अपभ्रंश भाषा बद्ध नेमिनाथ-रास	आ. वर्धमान-सूरि शिष्य श्री सागरचंद्रमुनि	रमणीक शाह	१० । ३६-४३
* उपधान-प्रतिष्ठा पञ्चाशक प्रकरणम्	आचार्यश्री हरिभद्रसूरि	पं. प्रद्युम्नविज-यजी गणी	४ । ३४-३८
* उमास्वाति-आर्यसमुद्रनां नवप्रास पद्यो विशे		मधुसूदन ढांकी	५ । ५४-५९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
* उर्दुभाषा बद्ध त्रण कृतिओ		मुनि भुवनचंद्र	७ । ८९-९६
* उवसग्गहर थुत्तनी समस्या पूर्ति		पं. शीलचन्द्र-विजय गणि	६ । ६२-६४
* "उवहाण पइट्ठा पंचासग" उपरथी फलित थतो एक मुद्दो		पं. शीलचन्द्र-विजय गणि	५ । ५२-५३
ए			
* १०१ बोलसंग्रह भूमिका	महोपाध्याय श्री यशो-विजयजी गणि	विजयशील-चन्द्रसूरि	७ । २१-४२
* एक पत्र		मुनि भुवन-चन्द्र	१२ । १०२-१०४
ओ			
* ओरिएन्टल कोन्फरन्स ३८मुं संमेलन		विजय पंड्या	९ । ११४
क			
* कालजयी साहित्यकृतिना पुनरुद्धारकनुं अभिवादन		विजयशील-चन्द्रसूरि	९ । ९७-९८
* **केटलाक मध्यकालीन गुजराती शब्दप्रयोगो**		जयंत कोठारी	२ । ९-१३
० 'अउगउ', 'उगउ'			२ । १०
० 'अउगनाइ'			२ । ९-१०
० 'अउल्हाइ'			२ । ९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. – पत्र
o 'अउले खाले वहै'			२ । ९
o 'अखाडो'			२ । १०
o 'अछिवउं', 'अछीउं'			२ । ११
o अछूतउ'			२ । ११
o 'कटरि'			२ । १२
o पूरक नोंध		ह. भायाणी	२ । १२–१३
* **केटलाक मध्यकालीन शब्दो**		जयंत कोठारी	३ । ३३–३९
o 'अधिवासियां'			३ । ३३
o 'अनिवड'			३ । ३३
o 'अनुभाव'			३ । ३४
o 'अप्रमाण'			३ । ३५
o 'अभोखउ','अभोखाउ' 'अभोखण'			३ । ३६
o 'अबाह'			३ । ३६
o 'अमलीमाण'			३ । ३८
o 'अमाइ', 'अमामो', 'अमाणुं', 'अमान'			३ । ३८
* **केटलाक देश्य शब्दो पर टिप्पण**			८ । १२८
o 'अणतंग–णंतग'			
o 'उत्तुण', 'उत्तुयय', 'उत्तूइय'			
o 'उप्पेउं'			
o 'उल्लण'			
o 'गोलिय'			

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
० 'चप्पुयिका			
० 'पहेणग			
० 'पद्दिया			
ग			
* गणधर होरा	अज्ञात-कर्तृक	विजयशील-चंद्रसूरि	११ । ४३-४६
* ग्रन्थमाहिती		शीलचन्द्र-विजय गणी + ह. भायाणी	३ । ४५-५०
* ग्रन्थमाहिती सामयिकोमां प्रकाशित लेख.व.			३ । ५०-५१
* 'गांगेयभङ्ग प्रकरण सस्त-बक' नामे कृतिना कर्ता विषे ऊहापोह 'गांगेय-भङ्ग प्रकरणम्'	उपाध्यायश्री यशोविजय	शीलचन्द्र-विजय गणि	२ । ५२-५७
* **गुरुस्तुतिरूप त्रण लघु कृतिओ**			९ । ९२-९४
० श्री जिनप्रबोधसूरि-श्री जिनचन्द्रसूरि चन्द्रायणा	श्री मोहम-न्दिर गणि	भँवरलाल नाहटा	९ । ९२-९३
० श्री जिनप्रबोधसूरि-नाराचबंध छंद	महं सज्जन-श्रावक	भँवरलाल नाहटा	९ । ९४
० श्री जिनेश्वरसूरि कुण्डलिया	महं सज्जन-श्रावक	भँवरलाल नाहटा	९ । ९३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
* गौतमस्वामि छन्दांसि एक उत्तरकालीन उपभ्रंश रचना	मेरुनन्दन-गणि	शीलचन्द्र विजय गणि	६ । ५६-६१
* श्री गौतमस्वामी रास	श्री रयणसे-हरसूरि	पं. शीलचन्द्र-विजय गणि	४ । ५६-६७
* श्री गौतमस्वामी रास (चौपाइ)	श्री शांतिदास	विजय शील-चन्द्रसूरि	७ । ५१-५७
घ			
* घवली विशे		खोडीदास परमार	४ । ८६
च			
* चर्चा पत्र		म.अ.मेहेंदळे	६ । ११३
* चर्चा पत्र		मधुसूदन ढांकी	७ । १२०-२३
* चर्चापत्र			
० प्रशस्तिसंग्रह - पृ.२६ श्री शान्तिनाथज्ञानभंडार खंभात		मुनिचन्द्रविजय गणि	७ । १२३-२५
० 'शेलो' 'कुलिंग' यौगिक साधनाने संदर्भे		मकरन्द दवे	७ । १२५-२७
* चतुरर्थी वीरस्तुतिः अज्ञात कर्तृकावचूरियुता	श्री हीरविजय सूरि	मुनि धुरन्धर विजय	११ । ६७-७०
* श्री चारूपमण्डन पार्श्वनाथ स्तुति		स्व. आगम-प्रभाकर मुनि पुण्यविजयजी	११ । १-५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
* चोवीस जिन गीतो	पंडित कवि तत्त्वविजय	मुनि जिनसेन विजय	११ । ११-२७
* चोवीश जिन नमस्कार (अष्टमी-माहात्म्य-गर्भ)	वाचक यशो विजय	शीलचन्द्रविजय गणि	५ । ४४-४६
ज			
* जगडूसाह छंद		कांतिभाइ बी. शाह	१० । ६८-७२
* श्री जिनपतिसूरि पंचाशिका		भँवरलाल नाहटा	११ । ३२-३६
* जिनविजयजीनो एक स्मरणीय भावोद्गार		ह. भायाणी	७ । १२८
* श्री जिन स्तुति		मुनि जगच्चन्द्र विजय गणि	८ । १२५-१२६
* जिन साधारण स्तवन सम संस्कृत प्राकृत	श्री हरिभद्र-सूरि	विजयशील-चन्द्रसूरि	८ । १००-१०१
* जिन साधारण स्तवननो आस्वाद सम संस्कृत-प्राकृत		पारुल मांकड	११ । २८-३१
* 'जुगाइ जिणिंद चरियं ना एक पद्यनो आधार		ह. भायाणी	६ । ९०
* जैन आगम-भाषा विषयक संगोष्ठीना संबंधमां विद्वानोना पत्रो		ह. भायाणी	१० । ११४
* जैन तीर्थस्थान तारंगा एक प्राचीन नगरी		रमणलाल महेता कनुभाई शेठ	३ । ४०-४२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
*** जैन प्राकृत-संस्कृत प्रयोगोनी पगदंडीए**			
० छंद चर्चा पाठचर्चा वगेरे			
० काव्य-गुंफ		ह. भायाणी	२ । २३
० छंदोनुशासन गत प्राकृत छंद प्रकार द्विभंगीनां उदाहरणोनी पाठचर्चा		ह. भायाणी	२ । २१-२२
० सि.हे. ८-४-३३० ना उदाहरणनो पाठ अने छंद		ह. भायाणी	२ । १८-१९
० सि.हे. ८-४-३९५ (१) नो पाठ अर्थ		ह. भायाणी	२ । २०
० सि.हे. ८-४-४२२ (२) नो पाठ अर्थ		ह. भायाणी	२ । २०
*** शब्द प्रयोगो**			
० प्रा. उद्दुब्भ के उद्दुब्भ् (?)		ह. भायाणी	२ । १५
० गुज. चणवुं, हिं. चुगना		ह. भायाणी	२ । १७
० सं. चेलक्नोपम् (वरसवुं)		ह. भायाणी	२ । १४
० प्रा. पाणद्धि-'शेरी'-'गली'		ह. भायाणी	२ । १५
० दे. मोरउल्ला, 'व्यर्थ'		ह. भायाणी	२ । १५
० दे. साइतंकार, विश्वस्त स प्रत्यय		ह. भायाणी	२ । १६-१७
* जैन विश्वभारतीनी आगम ग्रंथमालानां चार अद्यतन प्रकाशन			८ । १२७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
ट			
*** टूंक नोंध**			
० अजारा तीर्थना चैत्यनी प्राचीनता		विजय शील-चन्द्र सूरि	७ । १०५
० अपभ्रंश छंद भूवक्रणक		ह. भायाणी	४ । २३
० 'असड्डल'		ह. भायाणी	३ । २३
० 'अंगविज्जा' मां निर्दिष्ट भारतीय ग्रीककालीन अने क्षत्रपकालीन सिक्का		ह. भायाणी	६ । ८३-८६
० जू. गुज. 'आंबलु' पति-प्रियतम		ह. भायाणी	६ । ७८-७९
० 'उद्दाम' दंडक छंदनुं एक प्राकृत उदाहरण		ह. भायाणी	४ । २५
० उपाध्याय श्री यशोविजय-जीना अंतिम समय तथा समाधि स्थल विषे		विजय शील-चन्द्र सूरि	७ । १०२-१०४
० एक कहेवतरूप उक्तिनुं पगेरुं		पं. शीलचन्द्र विजय गणि	४ । २८
० एक गाथाना पाठ विशे		मुनि महाबोधि-विजय	४ । १९
० एक नोंधपात्र पुस्तकनी प्रशस्ति		विजय शीलचन्द्र सूरि	८ । ८०-८५
० 'कडितल्ला'		ह. भायाणी	३ । २४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
० केटलाक कथा-घटको			
० अक्कलना ओथमीर		ह. भायाणी	५ । ७२-७३
० अज्ञान ढांक्युं न रहे		ह. भायाणी	५ । ७३-७४
० उत्तम पुत्र प्राप्तिनुं शरती वरदान		ह. भायाणी	५ । ७४-७५
० खाउधरो शिष्य		ह. भायाणी	५ । ७६
० गाम डाह्यानो अज्ञानविलास		ह. भायाणी	५ । ७२
० चार मूर्खाओ		ह. भायाणी	५ । ७१
० पर पुरुषनो संग निवारवा स्त्रीने पेटमां संताडी राखवी		ह. भायाणी	५ । ६८-६९
० बोलायेला वचनो अकस्मात् सांभळी भलतो ज अर्थ लेता हत्याराथी उगारो		ह. भायाणी	५ । ६९-७०
० सामान्य शब्दोनुं मार्मिक अर्थघटन		ह. भायाणी	५ । ७६-८०
० केटलांक प्रसिद्ध पद्योनां समान्तर जूनां स्वरूप		मुनि महाबोधि विजय	४ । १८
० कृष्ण-गोपीना प्रणयने लगतुं एक मुक्तक	हेमचन्द्राचार्य	ह. भायाणी	१० । ७८
० घउंली, गूहली		ह. भायाणी	३ । २९
० 'चक्कोडा'		ह. भायाणी	३ । २५
० चंदप्पहचरियनी एक दृष्टान्त कथा	हरिभद्रसूरि	सलोनी जोषी	७ । ११६-१७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. – पत्र
० झंबडक गीत		ह. भायाणी	४ । २४
० तल्लोविल्लि		ह. भायाणी	३ । ३०
० त्रण मूल्यवान पद्यो		शीलचन्द्रविजय	३ । २१
० 'तूतीनामा'नां बे जैन चित्रो		शीलचन्द्रविजय गणि	४ । २०-२२
० धर्मसार (हरिभद्रसूरिकृत)		मुनि महाबोधि विजय	४ । १८
० 'नखच्छोटिका', 'ढौक' 'सुखासिका' 'दुःखासिका', 'ललते'		पं. शीलचन्द्र विजय गणि	५ । ६५
० 'नंद'		ह. भायाणी	३ । २६
० नीलीराग जैन		ह. भायाणी	४ । २९
० प्रबन्धचिन्तामणिगत एक अनुप्रासनी युक्तिवालुं पद्य		ह. भायाणी	७ । १११-११२
० प्रयोगोनी पगदंडी			
० गोरखनाथनुं एक पद		ह. भायाणी	५ । ८३
० झंबडक गीतनुं वधु एक उदाहरण		ह. भायाणी	५ । ८२
० 'सीझवुं' के 'सीजवुं' ?		ह. भायाणी	५ । ८१
० 'सूनासणा'		ह. भायाणी	५ । ८१
० पांडवचरित्र बालावबोधना थोडाक शब्दप्रयोगो विशे		मुनि भुवनचन्द्र	५ । ६६-६७
० प्रियतमा वडे प्रियतमनुं स्वागत		ह. भायाणी	६ । ८७-८९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. – पत्र
० 'पुष्प दूषितक' 'नंदयंति' 'भद्राभामिनी' : पूरक नोंध :		ह. भायाणी	४ । ३१–३३ ४ । ८९
० बे परंपरानो एक समान पौराणिक कथाघटक		ह. भायाणी	१० । ८८
० बे प्राचीन सुभाषितो उत्तर-कालीन साहित्यमां		ह. भायाणी	४ । २६
० मुनि प्रेमविजयजीनी टीपना गुजराती शब्दो		मुनि भुवनचन्द्र	७ । १०७–९
० मूलशुद्धि वृत्तिमांनुं एक सुभाषित		ह. भायाणी	४ । २८
० 'युगंधरी'		ह. भायाणी	३ । २७
० व्यवहारभाष्यनी एक गाथानी पाठचर्चा		शीलचन्द्रसूरि	१० । ७७–७८
० प्राकृत 'रंप्' छोलवुं		ह. भायाणी	३ । ३१
० वाचक उमास्वातिजीना पद्य विशे		मुनि महाबोधि-विजय	४ । १६
० वाचक उमास्वातिजीनुं एक वधु पद्य		मुनि महाबोधि-विजय	४ । १७
० वाचक उमास्वाति(?) नुं वधु एक पद्य		पं. शीलचन्द्र-विजय गणि	५ । ६३
० शत्रुंजयमंडन ऋषभदेव-स्तुति: थोडी पूर्ति		जयंत कोठारी	७ । ११४–१५
० शब्द प्रयोगो			
० 'अज्जुका' गणिकानुं संबोधन		ह. भायाणी	१० । ७९–८०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. – पत्र
० 'ओलिंभा'-'वामलूर' - उधइ, उधइनो राफडो		ह. भायाणी	१० । ८०-८२
० गुंड (धूलथी) खरडवुं,		ह. भायाणी	१० । ८७-८८
० 'चामरी'		ह. भायाणी	१० । ८२-८३
० बालग्गकवोदपालिआ, बालग्गपोतिआ		ह. भायाणी	१० । ८५-८६
० 'मुग्गड' 'मोग्गड' – अपुत्र विधवानी जप्त कराती मालमिलकत		ह. भायाणी	१० । ८३-८५
० हेलि प्रत्युषाण्ड		ह. भायाणी	१० । ८६-८७
० शुं आ गप्पुं गणाय ?		पं. शीलचन्द्र-विजय गणि	५ । ६३-६४
० स्थूर विशे		शीलचन्द्रविजय	३ । २२
० स्थूर विशे बे वधु उल्लेखो		पं. शीलचन्द्र-विजय गणि	५ । ६५
० सातवाहनक शास्त्र		ह. भायाणी	४ । ३०
० सिद्धहेमना एक अपभ्रंश दोहानुं अर्वाचीन रूपांतर		ह. भायाणी	७ । ११२-११४
० सेल्लि		ह. भायाणी	३ । २५
० हेमचन्द्राचार्ये प्रतिष्ठित प्रतिमा		विजय शील-चन्द्र सूरि	८ । ८१-८२
० हेमचन्द्राचार्यनी काव्य-व्युत्पत्ति सूचक एक वधु उदाहरण		ह. भायाणी	७ । ११०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
० श्री हेमचन्द्राचार्यनी शिष्य-परंपरा विशे		विजय शील-चन्द्र सूरि	७ । १०४
*** टूंकी नोंध**			
० प्रा. कियाडिया		ह. भायाणी	६ । ८१-८२
० मीण प्रत्ययवालां अर्धमागधी वर्तमान कृदन्तो		ह. भायाणी	६ । ७६-७७
० लजामणी		ह. भायाणी	६ । ८०
० सुकुमारिका प्रथमालिका		ह. भायाणी	६ । ८१
त			
* तीर्थंकर महावीरनुं देहवर्णन (जैन आगमग्रंथ औपपातिक-सूत्रना महावीर वर्णक अने तेना परनी अभयदेवसूरिनी वृत्तिने आधारे)		ह. भायाणी	११ ।९९-१०१
* त्रण चउवीसी - विहरमाण जिन स्तवन	लक्ष्मीसागर-सूरि शिष्य	मुनि कल्याण कीर्ति विजय	५ । ४७-५१
*** त्रण जिन स्तोत्रो**			
० श्री पावक पर्वतमण्डन संभव जिन स्तोत्र	श्री विवेकरत्न सूरिना शिष्य मुनि देवरत्न	विजय शील-चन्द्रसूरि	११ । ६५-६६
० श्री पार्श्वजिन लघु स्तवनम्	रूपचन्द्र	विजय शील-चन्द्र सूरि	११ । ६४-६५
० समस्त जिन स्तुति	रूपचन्द्र	विजय शील-चन्द्र सूरि	११ । ६३-६४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
* त्रण संस्कृत फग्गुकाव्यो			
० नाभेय जिन स्तवन	श्री यशो-विजयवाचक	पं. शीलचन्द्र-विजय गणि	३ । १२-१४
० नाभेय स्तवन	जगद्गुरु श्री हीर-विजय सूरि	पं. श्री शील-चन्द्रविजय गणि	३ । ६-९
० श्री सीमंधर जिन स्तवन	वाचक श्री सकलचन्द्र	पं. श्री शील-चन्द्रविजय गणि	३ । १०-११
* त्रंबावती तीर्थमाल	ऋषभदास	मुनि भुवनचन्द्र	८ । ६२-६९
द			
* दसमी विश्व संस्कृत परिषदमां जैन विभागमां रजू थयेल निबंधो		ह. भायाणी	८ । १३२
* दामन्नक कुलपुत्रकरास	ज्ञानधर्म	कल्पना के. शेठ	१२ । ४९-७०
* 'द्वयाश्रय' काव्यना एक पद्यनी शंकास्पद वृत्ति परत्वे विचारणा		शीलचन्द्रविजय गणि	२ । ५०-५१
ध			
* धर्ममहिमानुं एक सुभाषित		ह. भायाणी	३ । ४३-४४
* धर्मरत्न करंडक		ह. भायाणी	२ । ६३-६८
* धर्मसूरि बारमासा बारहनावउं (प्राचीन गूर्जर काव्य)	अज्ञात	रमणीक शाह	२ । ६९-७७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
* धूमावलि प्रकरणम्	सूरि पुरन्दर श्री हरिभद्र-सूरि	आ. विजय सूर्योदयसूरि	५ । १-३
न			
* श्री नवखंडा पार्श्वनाथ फग्गु काव्य	श्री आनंद माणिक्य	आचार्य प्रद्यु-म्नसूरि	६ । ४३-४६
* नव प्रकाशित साहित्यनो परिचय			५ । ८५-८६
प			
* पञ्चसूत्रावचूरिः	तपगच्छपति श्री मुनि-सुन्दर सूरि	विजय शील-चन्द्र सूरि	११ । ४७-६२
* पञ्चसूत्रना कर्ता कोण, चिरन्तनाचार्य के आ. हरिभद्र ?		विजय शील-चन्द्र सूरि	११ । ७१-९३
* पट्टक	विजय मानसूरि	महाबोधिविजय	१० । ४५-४९
* पट्टावली विसुद्धी	उपाध्यायश्री उदयविजय	प्रद्युम्नसूरि	७ । १-११
* पंडित वीरविजयजी स्वाध्यायग्रंथ		वसंत दवे	९ । १००-०१
* पढमाणुओगनी उपलब्ध वाचना		पं. शीलचन्द्र-विजय गणि	६ । १-४२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
* पढमाणुओग (अनु. ६) गत विशेषनाम्नां सूचिः ।		विजय शील-चन्द्र सूरि	७ । ५३-८०
* "परंपरागत प्राकृत व्याकरणकी समीक्षा और अर्धमागधी" ए पुस्तकनो परिचय		के. आर. चन्द्र	८ । १२२-१२४
* पार्श्वनाथ महादंडक स्तुति	उपाध्याय सहजकीर्ति	प्रद्युम्नसूरि	१२ । ८१-८९
* **प्रयोगोनी पगदंडी पर**			
० अरित्र		ह. भायाणी	९ । ९१
० सात 'सुख'		ह. भायाणी	९ । ९०
० क्षेपणी		ह. भायाणी	९ । ९१
* प्रकाशन परिचय		ह. भायाणी	९ । ११३
* **प्रकाशन माहिती**			
० एरिख फ्राउवाल्नर्झ पोस्थ्युमस एसेझ		ह. भायाणी	४ । ९१
० आचारांगसूत्र प्र. श्रु. बालावबोध			५ । ८७
० आयारङ्ग : पाद इन्डेक्स एन्ड रिवर्स पाद इन्डेक्स		ह. भायाणी	४ । ९१
० जैन दर्शन अने सांख्य योगमां ज्ञान दर्शन विचारणा		ह. भायाणी	४ । ९१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. – पत्र
० धेट ह्विच (तत्त्वार्थसूत्र)		ह. भायाणी	४ । ९२
० वोर्डर कृत इन्डिअन काव्य लिटरेचर (छट्ठो ग्रंथ)		ह. भायाणी	४ । ८९–९०
* **प्रकीर्ण**			
० नवां प्रकाशनोनी माहिती वगेरे.			१०।११२–११४
० नवां प्रकाशनोनी माहिती जैन आगम भाषा विषयक संगोष्ठीना संबंधमां विद्वानोना पत्रो			१०।११२–११४ ११४–११९
* पांडवचरित्र बालावबोध		ह. भायाणी	४ । ६८–८५
* पांडवचरित्र बालावबोध (अनु.–४ पृ.८५ थी चालु) (अंबा–अंबिका–अंबालिका – हरण)	मेरुरत्न उपाध्याय शिष्य	ह. भायाणी	६ । १०१–११२
* **प्राकृत प्रयोगोनी पगदंडी पर**			
० अर्धमागधीमां प्राप्त प्राचीन शब्द प्रयोगो		ह. भायाणी	७ । ९९–१००
० (१) उउ बद्ध 'उडुबद्ध' (२) पुरिसादाणीए (३) ताइ ।			
० प्राकृत 'उडुक्किय'		ह. भायाणी	७ । १०१
* प्राकृत शब्दाः संस्कृते नानार्थाः		पं. शीलचन्द्रविजय गणि	५ । ४–११

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. – पत्र
* पूरक नोंध		ह. भायाणी	४ । ८९
ब			
* बन्धकौमुदी	नृसिंह	विजय शील-चन्द्र सूरि	७ । १२-२०
* **बे भास :**		मुनि जिनसेन विजय	९ । ७६-७७
० श्री गौतम गणधर भास			
० श्री सुधर्म गणधर भास			
* बे सरस्वती स्तोत्र		मुनि रत्न-कीर्ति विजय	५ । २४-२७
* **बे संस्कृत स्तवन**		मुनि धर्मकीर्ति विजय	
० श्री आदिनाथ स्तवन	हेमहंसगणि		७ । ८१-८३
० श्री पार्श्वनाथ लघुस्तवन	जयसार		७ । ८३-८४
भ			
* भृगुकच्छ वास्तव्य राणीश्राविका गृहीत द्वादशव्रत वर्णन		मुनि विमल-कीर्तिविजय	३ । १५-२०
म			
* मध्यकालीन धर्म विषयक पद्यपरंपरा संगोष्ठी अहेवाल		वृत्त संकलन – प्रा. रमणीकलाल के. शाह प्रा. विनोद गांधी, गोधरा	११।११०-११४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. – पत्र
* मातृकाप्रकरण : एक महत्त्वपूर्ण अभ्यासनीय कृति	मुनि अक्षय-चन्द्र	विजयशील-चन्द्रसूरि, ह. भायाणी	१२ । १-४८
* मुनि प्रेमविजयनी टीप		मुनि भुवनचंद्र	६ । ७१-७५ ७ । १०५
० मुनि प्रेमविजयजीनो एक दस्तावेजी शिलालेख		शीलचन्द्र सूरि	७ । १०६
० मुनि प्रेमविजयजीनी टीपना गुजराती शब्दो		मुनि भुवनचन्द्र	७ । १०७-१०९
* मङ्गलवाद	वाचक सिद्धिचन्द्र गणि	विजय शील-चन्द्र सूरि	१० । १-९
य			
* **यतिदिनचर्या : वृत्तिनी गवेषणा**		प्रद्युम्नविजय गणि	२ । ५८-५९
० अज्ञात कृत वृत्ति	अज्ञात	प्रद्युम्नविजय गणि	२ । ६०
० टीकानो प्रारंभ भाग	श्री मति-सागर	प्रद्युम्नविजय गणि	२ । ६१-६२
र			
* रोयल एसिआटिक सोसायटी (लंडन) मांना टोड हस्तप्रत संग्रह-गत केटलीक नोंधपात्र हस्तप्रत		ह. भायाणी	८ । १३०-१३१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
* रेस्टोरेशन ओफ धि ओरिजिनल लेंग्वेज ओफ धि अर्धमागधी टेक्स्ट्स : एक परिचय		के.आर.चन्द्रा	५ । ६०-६२
* लघु कर्मविपाक-सस्तबकार्थ		मुनि धर्मकीर्ति-विजय	८ । ८९-९९
* ललितांग चरित्र - एक उत्तरकालीन विरल रासाबंध		ह. भायाणी	७ । १२९
* ललितांग चरित्र-अपरनाम रासक चूडामणि	ईसरसूरि	ह. भायाणी	८ । १-६१
* लेखशृंगार	पुण्यहर्ष	महाबोधिविजय	१० । ५०-६७
* वज्रस्वामी चरित (अपभ्रंश भाषा बद्ध)	आगमगच्छीय आ.श्री.जिन-प्रभसूरि	रमणीक शाह	६ । ४७-५५
* वर्षानुं आगमन - जैन आगम ज्ञाताधर्मकथा - प्रथम श्रुतस्कंधमांनुं वर्षावर्णन		अनुवाद : ह. भायाणी	१०।११०-१११
* वाचक यशोविजयजीनो पत्र - खरडो		पं. शीलचन्द्र-विजय गणि	६ । ६५-६७
श			
* शत्रुंजयमंडन ऋषभदेव स्तुति	तपागच्छे विजय दान सूरि शिष्य 'वासणा' साधु	मुनि भुवनचन्द्र	५ । ४०-४३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
* शत्रुंजय मंडन ऋषभदेव स्तुतिनी प्राप्त वधु हस्तप्रतो		मुनि भुवनचन्द्र	६ । ११४
* शत्रुंजय यात्रा वृत्तान्त	सोमतिलक सूरि	विजय प्रद्युम्न-सूरि	१० । १०-११
*** शब्द प्रयोगोनी पगदंडी**			
० दुली 'काचबो'		ह. भायाणी	४ । ४५
० चाउरी, गब्दिका, गर्त		ह. भायाणी	४ । ३९
० 'छो', अछो, भलो		ह. भायाणी	४ । ४१
० छेअ 'अंत - हानि'		ह. भायाणी	४ । ३९
० जाखल-सेखल (यक्षप्रतिमा-नागप्रतिमा)		ह. भायाणी	४ । ४१-४२
० तणी 'दोरडी'		ह. भायाणी	४ । ४३
० तोडहिआ-एक प्रकारनो ढोल		ह. भायाणी	४ । ४४
० शेलो		ह. भायाणी	४ । ४६
० सिऊरा		ह. भायाणी	४ । ४६-४७
*** शब्द-प्रयोगोनी पगदंडी पर**			
० ए । एय । ओ भाई		ह. भायाणी	११ । ९५
० ओलुं-पेली-अली-अल्या		ह. भायाणी	११ । ९४
० कसरक्क		ह. भायाणी	८ । १०८
० केकाण		ह. भायाणी	८ । १०९
० खेह		ह. भायाणी	८ । ११०
० बे कहेवत		ह. भायाणी	८ । १२०
- गाय वाले ते अर्जुन ने बदले गाय वाले ते गोवाल			

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
– चणानी जेम मरी न चवाय			
० गुंगलावुं , गूंगणुं		ह. भायाणी	८ । १११
० चपटुं, चांपवुं, चीपवुं, चीवडो		ह. भायाणी	८ । ११२
० चंचोलवुं		ह. भायाणी	८ । ११३
० झपट-झापट		ह. भायाणी	८ । ११३
० झुमवुं-झूमखो-झूमणुं		ह. भायाणी	८ । ११४
० ठोंसो : ठोंसवुं-ठांसवुं-ठसवुं-ठेस		ह. भायाणी	८ । ११५
० थपथपी, थापडी-थपाट		ह. भायाणी	८ । ११६
० दीप-दीवो		ह. भायाणी	८ । १०८
० नकलंक		ह. भायाणी	८ । ११६
० प्रकीर्ण		ह. भायाणी	८ । ११९
० पृथ्वीराज-रासौनी मूल-भाषा		ह. भायाणी	८ । १२०-१२१
० पोपट-पोपचुं		ह. भायाणी	८ । ११६
० मळी-तलवट		ह. भायाणी	८ । ११७
० रांझण		ह. भायाणी	८ । ११७
० ववठावुं - वावठवुं		ह. भायाणी	८ । ११८
० वाणजु		ह. भायाणी	८ । १११
० वावलवुं		ह. भायाणी	८ । ११९
० वाहुडि		ह. भायाणी	८ । ११०
० विधवाने रातो साडलो पहेरवानी रूढि		ह. भायाणी	८ । १२०
० हं - हुं		ह. भायाणी	११ । ९७-९८
० हाय		ह. भायाणी	११ । ९५
० हांउं		ह. भायाणी	११ । ९५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
० हेय ! हैय्या !		ह. भायाणी	११ । ९६
* शब्दार्थ चन्द्रिका	पं. हंस-विजय	मुनि धर्मकीर्ति-विजय	५ । १२-२३
* श्रद्धा प्रसाद अने अध्यात्म प्रसाद		नगीन जी. शाह	२ । ८
* शाह वीराना सुकृत वर्णननी प्रशस्ति चउपई		पं. प्रद्युम्नविजय गणि	५ । २८-३८
स			
* सप्तदलं लेखकमलम् एक संस्कृत पत्र	विजय-लावण्यसूरि	विजयशील-चन्द्र सूरि	१२ । ७१-८०
* समुद्धारयज्ञनी पूर्णाहुति		ह. भायाणी	९ । ९८-९९
* 'समुद्र-वहाण' संवाद	वाचक यशोविजय	शीलचन्द्र-विजय	२ । १-७
* संशय गरल जाङ्गुली नाममाला	महेश्वर कवि	विजय शील-चन्द्र सूरि	१० । १२-३५
* **संशोधन माहिती**			
० श्री हंसरत्नकृत उपमिति कथा सारोद्धार:		आ. विजय प्रद्युम्न सूरि	११ । ११५
* संशोधन वर्तमान			१ । २२-४२
० संशोधन वर्तमान			२ । ८३
* **संशोधन समाचार**			
० मेरुतुंग बालावबोध व्याकरण		डॉ. नारायण म. कंसारा	१०।१०८-१०९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. – पत्र
* सांकळियुं : "अनुसंधान" १ थी १२ अंकोनुं		साध्वीश्री-चारुशीलाश्रीजी	१२।१०५-१३४
* स्तंभतीर्थनां देरासरोनी सूचि – १		मुनि भुवनचन्द्र	८ । ७०-७९
* श्री स्तंभनाधीश प्रबन्ध संग्रह : भूमिका		विजय शील-चन्द्र सूरि	९ । १-५
* श्री स्तंभनाधीश प्रबन्ध संग्रह	मेरुतंग सूरि	विजय शील-चन्द्रसूरि	९ । ६-६०
* श्री स्तंभन पार्श्वनाथ द्वात्रिंशत् प्रबन्धोद्धार	अज्ञात	विजय शील-चन्द्र सूरि	९ । ६१-७५
* **स्तुत्यात्मक सात लघु कृतिओ**		मुनि श्री धुरंधर-विजयजी	८ । ८३-८८
१) मंगलपुरीय नवपल्लव पार्श्वनाथ स्तवन			
२) मगसी पार्श्वनाथ स्तवन (कुटुम्बनामगर्भित)	रविसागर		
३) आदिनाथ स्तवन (सुख-भक्षिकानामगर्भित)	रविसागर		
४) वीरजिन स्तोत्र (सुखा-शिका नामगर्भित)	नेमिसागर		
५) हीर गीत	पुण्यहर्ष		
६) विजयसेनसूरि-गीत	पुण्यहर्ष		
७) आदिनाथ स्तुति (कुटु-म्बनाम गर्भित)	पंडित भक्तिसागर		

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
* स्याद्वाद-भाषा	श्री हीरविजय सूरीश्वर शिष्य श्री शुभविजय	नारायण म. कंसारा	८।१०२-१०७
* सालिभद्र-धन्ना चरित्रना कर्ता तथा एने अनुषंगे केटलुंक		जयंत कोठारी	४।१०-१५
* सिद्धसेन दिवाकरना चरितमां मलतुं एक अपभ्रंश पद्य		ह. भायाणी	३।४३
* सिद्धहेम शब्दानुशासन प्राकृत अध्यायनां उदाह-रणोना मूल स्रोत		ह. भायाणी	२।२५-२६
० मुख्य प्राकृत ८-१-१ थी ८-४-२५९		ह. भायाणी	२।२७-३७
० शौरसेनी - ८-४-२६० थी २८६		ह. भायाणी	२।८४
० मागधी - ८-४-२८७ थी ३०२		ह. भायाणी	२।३९-४१
० पैशाचिक - ८-४-३०३ थी ३२८		ह. भायाणी	२।४२
० चूलिका पैशाचिक (८-४-३२५ - ३२८)		ह. भायाणी	२।४२
० परिशिष्ट-मागधी नमिसाधु-हेमचंद्र		ह. भायाणी	२।४३-४४
० परिशिष्ट - शौरसेनी नमिसाधु-हेमचंद्र		ह. भायाणी	२।४५-४६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
० परिशिष्ट - पैशाची नमिसाधु-हेमचंद्र		ह. भायाणी	२ । ४७
० निष्कर्ष		ह: भायाणी	२ । ४८-४९
० पूरक नोंध		ह. भायाणी	२ । ८४
* सुधर्मास्वामीनो रास	अंचल-गच्छना पुण्यरत्नसूरि	साध्वी दीप्ति-प्रज्ञाश्री	९ । ७८-८७
* सुभद्रा-सती चतुष्पदिका	धर्ममुनि	कनुभाई शेठ	२ । ७८-८२
ह			
* हस्तप्रतनी प्रशस्तिमां प्राप्त नगरो के गामो अंगेनी ऐति-हासिक सामग्री : एक नोंध		डॉ कनुभाई शेठ	१० । ७३-७६
* हाल्लार देश चरित्रम्		मुनि धर्मकीर्ति-विजय	११ । ३७-४२
* हीरविजयसूरिनो लेख		मुनि महाबोधि-विजयजी	५ । ३९
* श्री हीरविजयसूरिना चार प्राकृत स्वाध्याय	१. धर्मसागर गणि २.३. मुनि पद्मसागर ४. विजय चन्द्रविबुध	पं. शीलचन्द्र-विजय	४ । ४८-५५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
* 'हीर सौभाग्यम्'नी स्वोपज्ञ वृत्ति मां प्रयुक्त तत्कालीन गुजराती-देश्य शब्दो		डॉ. प्रह्लाद ग. पटेल	४ । ५-९
ज्ञ			
* ज्ञानभंडार प्रशस्ति		आ. विजय प्रद्युम्नसूरि	११ । ६-१०

अंग्रेजी लेखो

A			
A glossary of Rare and Non-standard Sanskrit Words of The Kathāratnā Kara of Hemavijayagaṇi		H.C.Bhayani	९ । १०६-११२
A Note on अल्लुण, कुसुण/ कुसण, तीमण		H.C.Bhayani	८ । १३३-१३४
A Note on ullaṇa, Kusuṇa/ Kusaṇa		H.C. Bhayani	९ । १०२-१०३
B			
bhadram te and bhadanta		H.C.Bhayani	९ । १०४-१०५
D			
Desīs employed in Padma Vijaya's Samarāditya-Kevalī-Rās		Muni Rajhans-vijay	१०।८९-९३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृति	कर्ता	संपादक	अनु सं. - पत्र
I			
Interpretation of a Passage in the Bhagavadajjukīya		H.C.Bhayani	६ । ९९-१००
J			
Jain Monumental Paintings of Ahmedabad		Dr. Shriahar Andhare	६ । ९१-९८
N			
Notes on a few words from Bollee's Glossary to पिंडनिज्जुत्ति and ओहनिज्जुत्ति		H.C.Bhayani	१० । ९४-९९
Notes on some Prakrit Words		H.C.Bhayani	१०।१०५-१०७
P			
Pk. aliā - 'tied'		H.C.Bhayani	७ । ११८-११९
Prakrit Subhāśitas from Ramchandra's lost Sudhākalaśa		H.C.Bhayani	७ । १३०
S			
Some sporadic notes on Bṛhaddeśi		H.C.Bhayani	१०।१००-१०४
Some Note worthy Expressions (in Kathāratnākara)		H.C.Bhayani	९ । ११२
Some Notes on the Buddha Sahajayānai Siddha-Nātha Tradition		H.C.Bhayani	१२ । ९३-१०४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org